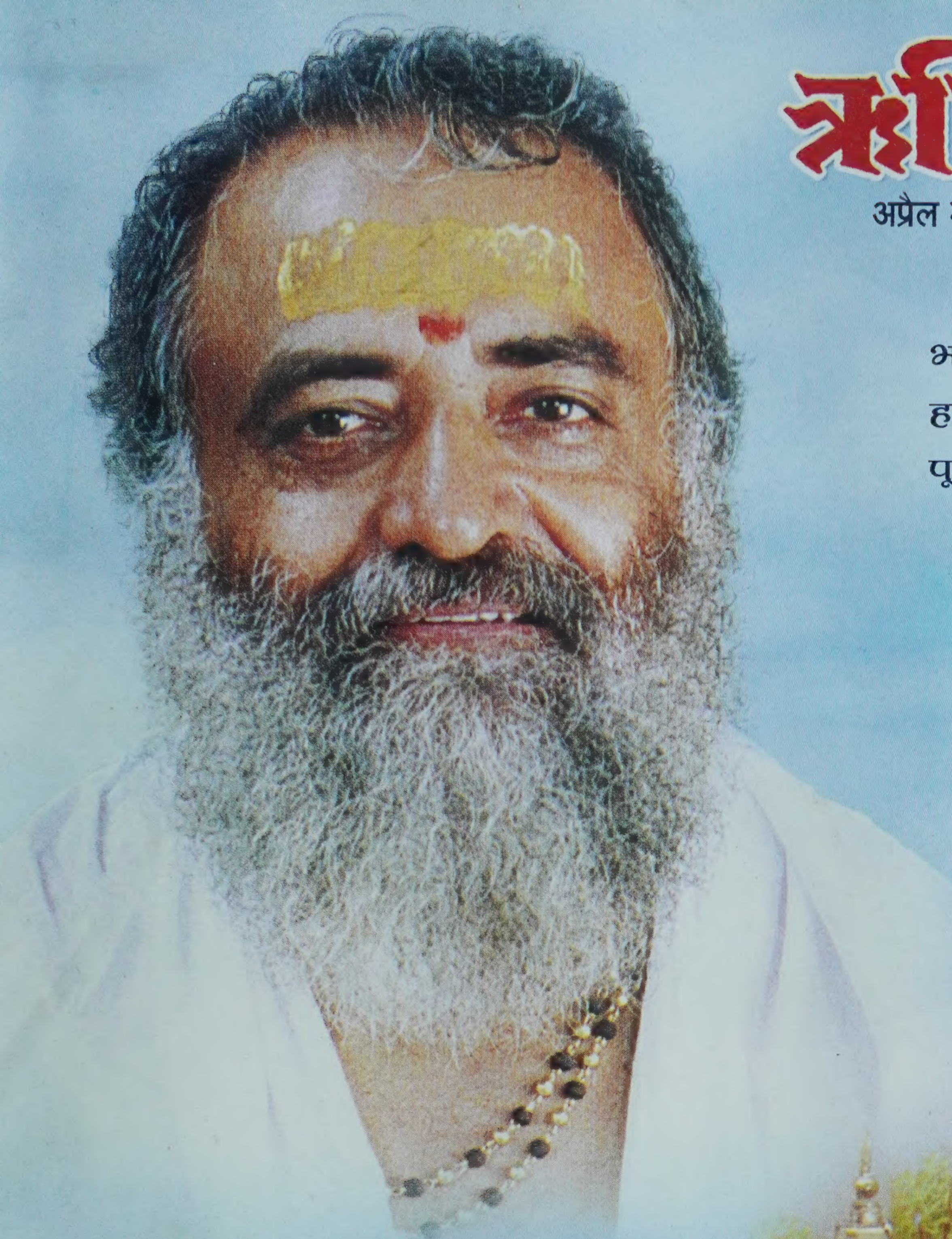
संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

अप्रैल २००६ मूल्य : रु. ६/- हिन्दी



अवतरण दिवस

भगवान श्रीरामजी : ६ अप्रैल

हनुमानजी : १३ अप्रैल

पूज्य बापूजी : १९ अप्रैल



यह भारतभूमि धन्य है जिस पर भगवान श्रीराम, श्रीकृष्ण जैसे अवतार, हनुमानजी जैसे अंशावतार अवतरित होते रहे हैं। हम संकल्प करें कि हम उनके अवतरण दिवसों पर उनके जीवन से प्रेरणा लेकर उनकी आज्ञाएँ व उपदेशों के अनुरागी बनकर अपना जीवन सफल करेंगे। विषय-विलास में निगुरों की नाईं पच-पचकर नहीं मरेंगे।



सद्गुणों की खान : श्री हनुमानजी

पृष्ठ : ८



देखा गुरुवर को एक बार और रंग लग गया। छूटा नश्वर से प्यार, प्रभु से तार जुड़ गया।
कैसा रंग बरसाया साँईं ! प्यार घोलकर। अघाता नहीं है अंतर्मन, खाली न रही कोई गागर ॥

वर्ष : १६ अंक : १६० अप्रैल २००६ चैत्र-वैशाख, वि.सं.२०६३ मूल्य : रु. ६-००

ऋषि प्रसाद

इस अंक में



जन्म-कर्म दिव्य बनाइये

पृष्ठ : १४

सद्गुणों की खान : श्री हनुमानजी



पृष्ठ : ८

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
मुद्रण स्थल : हार्दिक वेबप्रिंट, राणीप और विनय प्रिंटिंग प्रेस, अमदावाद।
सम्पादक : श्री कौशिकभाई वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा
श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक	:	रु. ५५/-
(२) द्विवार्षिक	:	रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक	:	रु. २००/-
(४) आजीवन	:	रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में

(१) वार्षिक	:	रु. ८०/-
(२) द्विवार्षिक	:	रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक	:	रु. ३००/-
(४) आजीवन	:	रु. ७५०/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक	:	US $ 20
(२) द्विवार्षिक	:	US $ 40
(३) पंचवार्षिक	:	US $ 80
(४) आजीवन	:	US $ 200

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	१२०	५००
नेपाल, भूटान व पाक में	१७५	७५०
अन्य देशों में	US $ 20	US $ 80

कार्यालय : **'ऋषि प्रसाद'**, श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक अथवा सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखें।

हो विवेक प्रखर जिसका, राग-द्वेष भागे उसका



इच्छा और द्वेष ये दोनों मधु एवं कैटभ दैत्य हैं। जहाँ रस आयेगा - सूँघने का रस, देखने का रस, चखने का रस, सुनने का रस, काम-विकार भोगने का रस... वहाँ तो ये नहीं मर सकते। जहाँ ये रस फीके लगने लग जायेंगे वहाँ ये मधु-कैटभ मर जायेंगे।

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

असत्य संसार के सुख की इच्छा को राग बोलते हैं और किसी वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति से नफरत को द्वेष बोलते हैं। मनुष्य के पास उत्तम साधन है विवेक। उसे चाहिए कि वह विवेक का आदर करे। अनित्य सुखदायी लगता है लेकिन सुख देता नहीं, सुखाभास देकर घसीटता है। मनुष्य अगर इस प्रकार का विवेक कर ले कि सुख अनित्य में नहीं है, नित्य में है तो सत्य में राग होगा और असत्य से वैराग्य होगा।

नश्वर शरीर को 'मैं' मानना, नश्वर संसार का आश्रय लेकर सुखी होने का जो राग (इच्छा) है वह और उसमें कोई विघ्न डालता है तो जो द्वेष होता है, ये ही सारे दुःखों के मूल हैं।

राग-द्वेष यह द्वन्द्व है। इसको जीतने के लिए भगवान श्रीकृष्ण 'श्रीमद्भगवद्गीता' के सातवें अध्याय के २७वें श्लोक में उपाय बताते हैं :

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत।
सर्वभूतानि संमोहं सर्गे यान्ति परंतप ॥

इस श्लोक में सम्बोधन भगवान की दूरदर्शिता का, समझदारी का परिचय देता है। भगवान कहते हैं : हे भरतवंश में उत्पन्न 'भारत' - 'भा' माना ज्ञान और 'रत' माना उसमें रमण करनेवाले तथा 'परंतप' माना परिस्थिति और विकारों के अधीन न होनेवाले।

'हे भरतवंश में उत्पन्न परंतप ! (हे अर्जुन !) राग और द्वेष से उत्पन्न होनेवाले सुख-दुःखादि द्वन्द्वरूप मोह से मोहित संपूर्ण प्राणी संसार में मूढ़ता को अर्थात् जन्म-मरण को प्राप्त हो रहे हैं।'

इच्छा और द्वेष ये दोनों मधु एवं कैटभ हैं। पौराणिक कथा है कि मधु व कैटभ नाम के दैत्यों से परेशान होकर देवताओं ने भगवान को प्रार्थना की और भगवान नारायण मधु-कैटभ से भिड़े। १ वर्ष... २ वर्ष... करते-करते

संत और नदी जहाँ पर रहते हैं, वह स्थान और व्यक्ति पवित्र हो जाते हैं।

५००० वर्ष तक भगवान मधु-कैटभ से भिड़ते रहे पर मधु-कैटभ मरें ही नहीं ! आखिर भगवान पर मधु-कैटभ प्रसन्न हो गये व बोले : ''हम दो और तुम अकेले, फिर भी मैदान नहीं छोड़ते हो, इस बात पर नारायण ! हम तुम पर प्रसन्न हैं। वरदान माँग लो।''

भगवान बोले : ''वरदान यह दे दो कि तुम मेरे हाथों मर जाओ।''

''मरेंगे हम वहीं जहाँ रस न होगा।''

सूँघने का रस, देखने का रस, चखने का रस, सुनने का रस, काम-विकार भोगने का रस - जहाँ रस आयेगा वहाँ तो ये नहीं मर सकते। जहाँ ये रस फीके लगने लग जायेंगे वहाँ मधु-कैटभ मर जायेंगे। तो भगवान ने साधन बताया : भाई ! मधु-कैटभ अर्थात् राग और द्वेष उन्हीं साधकों के मरेंगे जिनका विवेक पुख्ता होगा। विवेक कहाँ से मिलेगा ?

बिनु सतसंग बिबेक न होई।

'सत्संग के बिना विवेक नहीं होता।'

विवेक बहुत ऊँची चीज है और वह सत्संग से प्रखर होता है। विवेक का नौवाँ हिस्सा बुद्धि है। विवेक जितना प्रखर होता है, बुद्धि उतनी ही बलवान हो जाती है। ...तो सत्संग कैसे मिले ?

रामकृपा बिनु सुलभ न सोई।

भगवान की कृपा, संत की अहैतुकी दया अथवा पुरुषार्थ से सत्संग मिलता है। तन को, मन को, धन को, मति को प्रयत्नपूर्वक शुभ में लगाओ - यह पुरुषार्थ है। पुरुषार्थ करते जायें अर्थात् ऐसे कर्म करें कि भगवत्कृपा उतरे और सत्संग में जाने की बुद्धि बने अथवा कोई दयालु संत मिलें।

पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता।

(रामचरित. उ.कां. : ४५.३)

जब द्रवै दीनदयालु राघव, साधु संगति पाइये।

(विनयपत्रिका : १३६.१०)

पुण्यों के पुंज के बिना सत्संग नहीं मिलता। आपके किन्हीं शुभ कर्मों से भगवान जब द्रवीभूत हों तब सत्संग मिलता है और सत्संग से विवेक मिलता है।

हमारा राग कहाँ है ? एक जगह पर राग हो तो भी चलो, गनीमत है परंतु राग बँटा हुआ है। बिल्वमंगल का राग वेश्या में था। वेश्या ने देखा कि बिल्वमंगल बाढ़ के पानी को भी लाँघकर मेरे घर तक पहुँच गया ! इतना साहसी आदमी और हाड़-मांस में उलझ रहा है ! वेश्या ने उसे फटकारा और बिल्वमंगल का जो राग वेश्या में उलझा था, वह भगवान में हो गया। बिल्वमंगल में से संत सूरदासजी का प्राकट्य हो गया। तुलसीदास का राग पत्नी में था और पत्नी ने सुना दिया :

हाड़-मांस की देह मम, वा में इतनी प्रीति।
या ते आधी जो राम प्रति, अवश मिटे भव भीति ॥

उनका वही राग, काम का राग राम में बदल गया और संत तुलसीदास बन गये।

हमारा द्वेष भी एक जगह हो तो भी काम चल जाय। शिशुपाल को द्वेष था भगवान से। भगवान से द्वेष करते-करते भगवान का चिंतन तो हुआ न ! तो वह भगवान में ही समा गया। कंस को भय था भगवान से किंतु हम तो जरा इससे डरे, जरा उससे डरे, जरा इधर राग किया, जरा उधर राग किया। जिनको भगवान से द्वेष है, जो भगवान से भयभीत हैं उनको भगवत्-चिंतन तो होता है, उनकी मुक्ति तो हो जाती है लेकिन उन्हें भगवद्रस का आनंद नहीं मिलता परंतु जिनको भगवान से प्रेम हो जाता है, जो भगवान को अपना मानते हैं और प्रीतिपूर्वक भजते हैं उनकी बुद्धि में भगवद्योग, भगवद्रस आने लगता है। इस रसीले जीवन के द्वारा उनकी यात्रा हो जाती है और द्वेष करनेवालों की उद्विग्न जीवन के द्वारा यात्रा हो जाती है।

जिनको भगवान से द्वेष है, जो भगवान से भयभीत हैं उनको भगवत्-चिंतन तो होता है, उनकी मुक्ति तो हो जाती है पर उन्हें भगवद्रस का आनंद नहीं मिलता

गोपियों का राग भगवान में था। श्रीकृष्ण को अपना प्रियतम माननेवाली गोपियाँ भी थीं। उनका राग एक जगह था। शुकदेवजी कहते हैं : 'प्रियतम भाव से भजनेवाली गोपियों का भी भला हो गया क्योंकि भगवान तो भगवान हैं !'

निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बंधात्प्रमुच्यते।

'हे अर्जुन ! राग-द्वेषादि द्वन्द्वों से रहित पुरुष सुखपूर्वक संसारबंधन से मुक्त हो जाता है।'

(श्रीमदभगवद्गीता : ५.३)

तो रागरहित होने का उपाय क्या है ? रागरहित होने का उपाय है कि आपके पास जो भी वस्तु, व्यक्ति व योग्यताएँ हैं उनका दुरुपयोग करना छोड़ दो। शास्त्र और

जो सत्य में प्रतिष्ठित होता है, उसके कार्य सफल होते हैं।

समाज के विरुद्ध उन वस्तुओं के उपयोग का चिंतन व उपयोग बंद कर दो तो सदुपयोग अपने-आप होने लगेगा। बुरा करने से बच जाओ तो अच्छा होने लगेगा। इससे सदुपयोग करने का अहंकार भी नहीं आयेगा कि 'मैं अच्छा करता हूँ। बीमारी हटा दो तो स्वास्थ्य आ जायेगा।'

जो भी आपका है - तन है, मन है, धन है उसका व्यर्थ खर्च छोड़ दो, व्यर्थ का संग्रह छोड़ दो, व्यर्थ का अहंकार छोड़ दो। अगर रूप सुन्दर है तो उसका अहंकार न करो क्योंकि आखिर मिट्टी में मिल जायेगा। धन ज्यादा है तो उसका भी अहंकार न करो क्योंकि कई धनवान सब छोड़कर मर गये। तन का, धन का, मन का सदुपयोग सत्य की प्राप्ति में करो। न अधिक संग्रह करो, न व्यर्थ विलास में खर्च करो। अपनी आवश्यकताएँ नपी-तुली रखो।

'परहित सरिस धर्म नहिं भाई' दूसरों को भक्ति मिले, ज्ञान मिले, सत्संग मिले, भगवान की प्रीति मिले, संयम मिले, विवेक मिले, वैराग्य मिले - इसमें आपके तन का, मन का, धन का, योग्यता का उपयोग हो एवं इनका दुरुपयोग बच जाय ऐसा प्रयास करें। विलासिता, संग्रह, व्यर्थ के चिंतन व वस्तुओं के दुरुपयोग से बचोगे तो चिंता दूर हो जायेगी।

कोई दैत्य या यमराज हाथ पकड़कर आपको नरक में नहीं ले जायेगा। अंतकाल में आपके चित्त की जैसी अवस्था होगी, आप आगे उसी ढंग की यात्रा करने लगोगे।

कोई दैत्य या यमराज हाथ पकड़कर आपको नरक में नहीं ले जायेगा। अंतकाल में आपके चित्त की जैसी अवस्था होगी, आप आगे उसी ढंग की यात्रा करने लगोगे। जैसे पाप-वासना जोर पकड़ती है तो व्यक्ति शराब में सुख मानता है, जुए में सुख मानता है, पान मसाले में सुख मानता है; चोरी, बेईमानी, परस्त्रीगमन आदि में सुख मानता है क्योंकि मति मारी गयी है। अगर पुण्य जोर मारता है तो अपनी पत्नी होते हुए भी संयम से रहेगा; जप, ध्यान, सेवा, सुमिरन, दान, पुण्य करेगा। अपने ही पुण्य और पुण्य बढ़ाने की सद्बुद्धि देते हैं तथा अपने ही पाप और पाप बढ़ाने की दुर्बुद्धि देते हैं।

मनुष्य स्वतंत्र इसलिए है कि वह विवेक का आश्रय ले सकता है। भगवान को अपना और अपने को भगवान का मानकर उनके नाम का जप **'ॐ ॐ श्री परमात्मने नमः, हरये नमः'** करके अपना विवेक और जगाये तथा विवेक का आश्रय लेकर अशुभ से बचे। दृढ़ निश्चयी होकर भगवान की तरफ लग जाय तो राग-द्वेष ढीले हो जायेंगे।

पुण्य उदय हुए और पाप क्षीण हुए इसकी पहचान क्या है ? - ईश्वर की तरफ चलने का दृढ़ निश्चय हो गया तो समझ लो कि पुण्य उदय हो गये।

काची काया मन अथिर, थिर-थिर काम करंत।
ज्यों ज्यों नर निधड़क फिरे, त्यों त्यों काल हसंत॥

काया कच्ची (मिटनेवाली) है, धन कच्चा है, मन चंचल है फिर भी आदमी अचल रहने के लिए प्रयत्न कर रहा है। काल उसका मखौल उड़ाता है कि मरनेवाले शरीर और चंचल मन वाला मनुष्य स्थिर रहने की कैसी बेवकूफी कर रहा है!

यक्ष ने धर्मराज युधिष्ठिर को सवाल पूछा : ''इस पृथ्वी पर सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है ? ऐसा कौन-सा आश्चर्य है जो सबको भुलावे में डालता है ?'' तो युधिष्ठिर महाराज ने कहा :

अहन्यहनि भूतानि गच्छन्तीह यमालयम्।
शेषाः स्थावरमिच्छन्ति किमाश्चर्यमतः परम्॥

'संसार से रोज-रोज प्राणी यमलोक में जा रहे हैं, किंतु जो बचे हुए हैं वे सर्वदा जीते रहने की इच्छा करते हैं। इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या होगा ?'

(महाभारत, वनपर्वणि, आरणेय पर्व : ३१३.११६)

बड़े-बड़े कहलानेवाले तीसमारखाँ भी मौत की गोद में कब जाकर गिर जाते हैं, पता नहीं। बाहुबली, धनबली, सत्ताबली, बुद्धिबली भी देखो तो अस्थिर काल की धारा में बहे जा रहे हैं। जैसे कोई छोटा तिनका तो कोई बड़ा तिनका, कोई छोटा कंकड़ तो कोई बड़ा कंकड़ गंगा के प्रवाह में लुढ़कता ही चला जाता है, ऐसे ही समय की धारा में सब मौत की तरफ लुढ़कते ही जा रहे हैं और बाकी जो बचे हैं वे टिके रहने के लिए मजूरी कर-करके मर रहे हैं। इससे बड़ा आश्चर्य क्या होगा ? **जो सदा स्थिर है उधर ध्यान जाता नहीं और अस्थिर शरीर को, अस्थिर धन को, अस्थिर वाहवाही को स्थिर करने में लगे हैं; इससे**

बड़ी बेवकूफी, आश्चर्य क्या होगा ? सोचते हैं : 'जरा यह पा लूँ, वह पा लूँ, यह संग्रह कर लूँ, वह भोग लूँ... भैया ! यह शरीर ही नहीं टिकेगा तो भोग संग्रह कब तक टिकेगा ?' सब धरा रह जायेगा और मौत आकर घेर लेगी।

अभी श्मशान में मुर्दे जल रहे हैं । बिल्कुल सच कहता हूँ, जाकर देख आओ । ध्यान लगाकर नहीं कह रहा हूँ, अनुमान से सत्य बोल रहा हूँ कि अभी श्मशान घाटों पर मुर्दे जल रहे हैं। बिल्कुल पक्की बात है। अभी सवा बजा है, कल के सवा बजे उनको पता नहीं था कि ऐसे भभुक-भभुक आग में हमारे मांस के लोथड़े गिरते जायेंगे, बाल जल जायेंगे। कल एक बजे उन मुर्दों के मन में न जाने क्या-क्या मुरादें रही होंगी और मृत्यु के दो मिनट पहले उन्होंने क्या-क्या मुरादें मन में सँजोयी होंगी... अंत में सारी मुरादें मटियामेट हो जाती हैं। क्या अपने लिए वह दिन नहीं आयेगा ? जरूर आयेगा, कभी भी आ सकता है, कहीं भी आ सकता है।

जो चालनहार है उसको स्थिर करने का यत्न करके परेशान हो रहे हैं और जो स्थिर है उसमें प्रीति नहीं हो रही है, यही विडम्बना है ! जो शरीर मिटनेवाला है उसको 'मैं' मान रहे हैं, जो वस्तुएँ छूटनेवाली हैं उनको तो 'मेरी' मान रहे हैं और जो अमिट है उसको 'मैं' रूप में जानते नहीं।

बाबा ! अब उस अमिट आत्मा को 'मैं' रूप में जानने के लिए क्या उपाय करें ? साधन व सत्संग करो और विवेक जगाओ । परमात्मा को जानने का दृढ़ निश्चय करो। जो भगवान की तरफ चलने का निर्णय कर लेता है, उसके लिए भगवान बोलते हैं : **साधुरेव स मन्तव्यः...** वह साधु ही मानने योग्य है। **सम्यग्व्यवसितो हि सः। (श्रीमद्भगवद्गीता : ९.३०)** क्योंकि वह दृढ़ निश्चय कर लेता है कि अब मुझे अनित्य में सुख की खोज नहीं करनी है, नित्यस्वरूप, सुखस्वरूप में ही विश्रांति पानी है। दृढ़ निश्चय करने से उसकी मति कैसी होगी ? इस बारे में गीता के सातवें अध्याय के २८वें श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है :

ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः ।

राग-द्वेषजनित द्वन्द्वरूप मोह से मुक्त दृढ़निश्चयी भक्त मुझको सब प्रकार से भजते हैं अर्थात् ऐसा दृढ़निश्चयी राग-द्वेष जनित द्वन्द्वरूप मोह से मुक्त हो जायेगा।

काव्य गुंजन

जिंदगी है गीत प्यारा...

जिंदगी है गीत प्यारा,
गुरुवर से गाना सीख ले ।
रोते रोते क्या है जीना,
मुस्कराना सीख ले ॥
बीती बातों को भुला,
भावी की उज्ज्वल नींव रख ।
क्या है सच्चा क्या है झूठा,
उसकी कर ले तू परख ॥
मान्यता का सुख-दुःख सारा,
व्यर्थ उसमें मत उलझ ।
गुरुज्ञान में मस्त हो जा,
जग को सपना तू समझ ॥
जग के लिए तो रोता आया,
प्रभुप्रेम में रोना सीख ले ।
अपने लिए तो किया बहुत,
अब सेवा करना सीख ले ॥
माना जाता जिससे सब कुछ,
उसको प्यारे मान ले ।
जाना जाता जिससे सब कुछ,
उसको बंदे जान ले ॥
देखके तुमको खिल जायेगी,
औरों की जीवन बगिया ।
है आनंद का सागर तू ,
निज रूप को पहचान ले ॥
जिंदगी है गीत प्यारा,
गुरुवर से गाना सीख ले ।
रोते रोते क्या है जीना,
मुस्कराना सीख ले ॥

- विकास, अमदावाद ।

महान भगवद्भक्त प्रह्लाद

(गतांक से आगे)

शिवजी : ''स्वामिन् ! आज तो आपने पूरा प्रलयकाल का-सा दृश्य ही उपस्थित कर दिया था। दैत्यराज का नाश कर आपने जो देवताओं का संकट काटा है, उसका सबसे अधिक श्रेय परम भागवत प्रह्लाद ही को है। अतः हम उनको अंतःकरण से आशीर्वाद देते हैं।''

देवराज इन्द्र : ''दीनबंधो ! अशरण-शरण ! नाथ ! आपने प्रबल प्रतापी असुर हिरण्यकशिपु का वध करके हम देवताओं की रक्षा की है। इसके लिए आपके चरणों में मेरा बारम्बार साष्टांग प्रणाम है। भगवन् ! दैत्यराज के वध में प्रह्लाद की अविचल भक्ति ही मुख्य कारण है।''

महर्षि नारद : ''हे भक्तवत्सल ! आपने दैत्यराज को मारकर परम भागवत प्रह्लाद तथा अन्यान्य भागवतों के धर्म और प्राणों की रक्षा की है। इसके लिए आपके चरणों में मेरा सादर प्रणाम है।''

प्रजापति : ''हे नाथ ! हम लोगों ने आपकी आज्ञा से जो सृष्टि की थी, उसको नष्ट-भ्रष्ट करनेवाला दैत्यराज आज आपकी कृपा से स्वयं नष्ट हो गया है। यह बड़े आनंद की बात है।''

गंधर्व : ''हे विभो ! हम लोगों को जो दैत्यराज बलात् अपने अधीन रख नचाता-गवाता तथा तंग किया करता था, उसकी आपने यह दशा की। इसके लिए हम लोग आपके चरणकमलों में कोटिशः साष्टांग प्रणाम करते हैं।''

पितर : ''हे नरहरि ! जो दैत्यराज अपने बल से सारे संसार के पुत्रों के दिये हुए पिण्डदान और तिलांजलि को अपने पेट में भर लिया करता था, उसका आपने पेट फाड़ डाला है। इस कारण हम लोगों को बड़ा आनंद है। अतएव आपके चरणों में हम बारम्बार प्रणाम करते हैं।''

नाग : ''भगवन् ! जिस पापी दैत्य ने हमारी स्त्रियों और रत्नों को हर लिया था, आज उसका हृदय विदीर्ण करके आपने जो हम लोगों को आनंद प्रदान किया है - इसके लिए हम आपको बारम्बार प्रणाम करते हैं।''

इसी प्रकार ऋषिगण, सिद्धगण, विद्याधरगण, मनु, चारणगण, यक्षगण, किंपुरुष, वैतालिक, किन्नरगण तथा विष्णुपार्षदों ने भी भगवान की स्तुति की और परम भागवत प्रह्लादजी को आशीर्वादपूर्वक मनोवांछित वर अर्थात् भगवान की अविचल भक्ति सदा बनी रहने का वर प्रदान किया। भगवान नृसिंह की आज्ञा से ब्रह्मादि देवताओं ने तथा महर्षियों ने प्रह्लादजी को दैत्यराज के राजसिंहासन पर अभिषिक्त कर उनको दैत्यों का अधीश्वर बनाया। 'पद्म पुराण' में कहा है कि -

ततो देवगणैः सार्द्धं सर्वेशो भक्तवत्सलः।
प्रह्लादं सर्वदैत्यानां चक्रे राजानमव्ययम्॥
आश्वास्य भक्तं प्रह्लादमभिषिच्य सुरोत्तमैः।
ददौ तस्मै वरानिष्टान् भक्तिं चाव्यभिचारिणीम्॥

'स्तुतियों के पश्चात् देवगणसहित भक्तवत्सल भगवान ने अनेक ज्येष्ठ भ्राताओं के होते हुए भी समस्त दैत्य-साम्राज्य के राजसिंहासन का स्वामी प्रह्लाद ही को बनाया और उनको आश्वासन देकर उनका राज्याभिषेक भी किया तथा अनेक वरों के सहित उनकी मनोवांछित - अपने चरणों की अविचल भक्ति भी दी।'

इतना सब हो जाने पर भगवान नृसिंहजी ने ब्रह्माजी से कहा : ''आप अब भविष्य में कभी किसी दैत्य को ऐसा वर न दें क्योंकि सर्प को दूध पिलाने से विष ही तो बढ़ता है।'' ब्रह्माजी ने यह आज्ञा शिरोधार्य की और भक्त-वत्सल भगवान अपने वात्सल्यरस की महिमा दिखा के अन्तर्धान हो गये।

(क्रमशः)

परिप्रश्नेन...

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

प्रश्न : जीवन में धर्म के लिए कितना समय देना चाहिए ?

उत्तर : हकीकत में दैनिक जीवन धर्ममय होगा तो ही वास्तव में जीवन होगा और दैनिक जीवन को धर्म से अलग करेंगे तो वह पशु-जीवन हो जायेगा। इसलिए जो कुछ भी करो, इस भाव से करो :

खाऊँ पिऊँ सो करूँ पूजा, हरूँ फरूँ सो करूँ परिक्रमा, भाव न राखूँ दूजा ॥

सृष्टि के आदि में ईश्वरसत्ता थी, अभी है और बाद में रहेगी। उसके साथ तालमेल करके जो भी हरकत करेंगे, जो भी व्यवहार करेंगे वह सब धर्म है।

प्रश्न है, धर्म को अलग से कितना समय दें ? धर्म कोई स्नानागार नहीं है कि चलो भाई ! स्नान करके साफ-सुथरे होकर आये और फिर मैले हो के स्नान करने गये। धर्म तो दैनिक जीवन में, व्यवहार काल में भी होना चाहिए। पूजाघर तथा मंदिर में सज्जन बन के गये और बाहर शोषण, भोग व संग्रह में पड़े तो जैसे स्नानागार के लिए समय दिया, वैसे आपने धर्म के लिए समय दिया- ऐसा नहीं होना चाहिए। धर्म हो खान-पान से लेकर, शयन से लेकर, व्यवहार से लेकर जन्म-मरण तक; पूरा समय धर्ममय हो। इससे आप तो उठते जाओगे, अपने सम्पर्क में आनेवालों को भी ऊँचा उठाने में सक्षम हो जाओगे।

माला घुमाना अथवा मंदिर में जानेमात्र से ही भजन, धर्म पूरा नहीं हो जाता। आपका प्रत्येक व्यवहार आपकी वास्तविक उन्नति, शाश्वत उन्नति करनेवाला हो, इसका नाम धर्म है। आप किसी भी व्यवहार से पतन चाहते हैं क्या ? नहीं। तो सब कुछ धर्ममय हो। सारा दिन और सारी रात भी धर्ममय हो।

रात भी धर्ममय कैसे हो ? सोने से पहले जो कुछ भलाई, अच्छाई हुई उसे ईश्वर को अर्पण कर दो तथा कहीं अनुचित कर्म या फिर वासना, अहंकार या द्वेष से कर्म हुए हों तो उनका सिंहावलोकन करो। फिर 'हे प्रभु ! द्वेषबुद्धि, रागबुद्धि जन्म-मरण में भटकाती है। मेरे चित्त में समता और बुद्धि में उदारता दो। मुझे सत् का संग दो।' ऐसी प्रार्थना कर लेट जाओ। श्वास अंदर जाय तो शांति, बाहर आये तो गिनती; श्वास अंदर जाय तो ॐ, बाहर आये तो गिनती। इससे आपकी नींद भी धर्ममय हो जायेगी।

प्रभात को जब उठो तो थोड़ी देर चुप बैठो। फिर जो शुभ कर्म करने हैं उन पर, अपने व कुटुंबियों के स्वास्थ्य के बारे में, घर में कलह है तो उसके बारे में विचार करो और भगवान से सद्बुद्धि व सत्प्रेरणा पाओ। इससे आपका दिन भी धर्ममय, रात भी धर्ममय, जीवन भी धर्ममय और मृत्यु भी धर्ममय हो जायेगी। धर्ममय मृत्यु का मतलब है जन्म-मरण के दुःखों से पार हो जाना। जीवन जीना एक कला है। कला दो मिनट के लिए थोड़े ही सीखी जाती है। कला व्यवहार में लायें तभी तो उसका फायदा है। इसलिए धर्म के लिए कितना समय देना चाहिए ? - पूरा समय धर्ममय होना चाहिए। पत्नी कितने समय तक पति की होती है ? शादी की तबसे पूरा समय न ! जीवात्मा कितनी देर भगवान का होता है ? बोले : भगवान का था, है और रहेगा। भगवान की स्मृति बनाये रखकर उसकी प्रसन्नता के लिए काम करो। कितना समय क्या, सभी समय - पूरा समय।

'धर्म के लिए कितना समय देना चाहिए ?' - यह ऐसा ही सवाल है जैसे कोई पूछे कि 'पत्नी कितने समय के लिए पति की रहे ?' जैसे पत्नी को पता चल गया है कि 'ये मेरे पति हैं', ऐसे हमें पता चल जाय कि 'परमात्मा ही सार है। उसीकी सत्ता से सब कुछ होता है।' तो परमात्मसत्ता से एकाकार होकर उसका अधिक-से-अधिक फायदा उठाने की व्यवस्था का नाम है 'धर्म'। इसलिए धर्म के लिए कुछ समय नहीं, पूरा समय देना चाहिए।

कामना से रहित कर्म ही सर्वोत्तम त्याग अथवा पूजन है।

(श्री हनुमान जयंती : १३ अप्रैल २००६)



सद्गुणों कि

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

एक दिन भगवान श्री रामचन्द्रजी और भगवती सीताजी झूले पर विराजमान थे। हनुमानजी आये और झूला झुलाने लगे। सीताजी ने कहा : ''हनुमान ! पानी...'' रामजी ने कहा : ''झूला झुलाओ।'' हनुमानजी झूले की रस्सी हाथ में लिये हुए पानी लेने गये; झूला भी झूल रहा है और पानी भी ले आये।

हनुमानजी पूरी कुशलता से कर्म करते। कार्य की सफलता का सामर्थ्य कहाँ है, यह जानते हैं हनुमानजी। वे विश्रांति पाना जानते हैं। हनुमानजी को न परिणाम का भय है, न कर्मफल के भोग की कामना है, न लापरवाही है और न पलायनवादिता है।

''हम भक्तिमार्ग पर चलकर भगवान के सेवाकार्य करते हुए भगवत्स्वरूप की यात्रा कर रहे हैं और हम भगवान के पास नहीं गये, भगवान स्वयं चलकर हमारी ओर आये, इसलिए हम अति बड़भागी हैं।''

हनुमानजी की भक्ति है 'निर्भरा भक्ति' - एकनिष्ठ भक्ति। अपने राम स्वभाव में ही निर्भर, कर्मफल पर निर्भर नहीं। स्वर्ग और मुक्ति आत्मविश्रांतिवालों के आगे कोई मायना नहीं रखती। हनुमानजी कहते हैं : ''प्रभु ! आपकी भक्ति से जो प्रेमरस मिल रहा है वह अवर्णनीय है, अनिर्वचनीय है। मुझे मुक्ति क्या चाहिए, स्वर्ग क्या चाहिए, प्रभु ! आप सेवा दे रहे हैं, बस पर्याप्त है।''

हनुमानजी का व्यवहार भगवान रामजी को, माँ सीताजी को और तो और लक्ष्मण भैया को भी आह्लादित करता था। लक्ष्मण कहते हैं : 'मैं वर्षों तक माँ सीताजी के चरणों में रहा। मैं सेवा करने में उतना सफल नहीं हुआ, उतना विश्वास-संपादन नहीं कर सका, जितना हनुमानजी आप... मेरी कुछ लापरवाही के कारण सीताजी का अपहरण हो गया पर हनुमानजी ! आपके प्रयास से सीताजी खोजी गयीं। श्रीरामजी तक सीताजी को पहुँचाने का, उनका मिलन कराने का भगीरथ कार्य आपने किया। आप लंका गये और पहली बार माँ सीता के साथ आपका जो वार्तालाप हुआ, उससे माँ सीता प्रसन्न हो गयीं व आप पर विश्वास के साथ-साथ वरदानों की वृष्टि की। हम इतने वरदान नहीं पा सके, इतने विश्वासपात्र नहीं हो सके।'

हनुमानजी लंका जाते हैं। वहाँ विभीषण उनको कहते हैं :

सुनहु पवनसुत रहनि हमारी।
जिमि दसनन्हि महुँ जीभ बिचारी ॥

''हे पवनसुत हनुमान ! हम यहाँ कैसे रहते हैं ? जैसे दाँतों के बीच जीभ रहती है, ऐसे रावण और उसके साथियों के बीच मैं अकेला रहता हूँ।

तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा। करिहहिं कृपा भानुकुल नाथा ॥

मुझ अनाथ को कैसे वे सूर्यवंशी भगवान राम जानेंगे और कैसे सनाथ करेंगे ? मेरी भक्ति कैसे फलेगी ? क्योंकि हम कैसे हैं ? अब सुनो :

तामस तनु कछु साधन नाहीं। प्रीति न पद सरोज मन माहीं ॥

दैत्य लोग (राक्षस योनि) हैं, तामस तन है। भगवान के चरणों में प्रीति नहीं है। जो प्रीतिपूर्वक भजते हैं उन्हें बुद्धियोग मिलता है। हम तामसी लोग प्रीति भी तो नहीं कर सकते लेकिन अब मुझे भरोसा हो रहा है क्योंकि हनुमान ! तुम्हारा दर्शन हुआ है।

ख्यान : श्री हनुमानजी

अब मोहि भा भरोस हनुमंता।
बिनु हरिकृपा मिलहिं नहिं संता॥

भगवान की मुझ पर कृपा है तभी तुम्हारे जैसे संत मिले हैं।''

हनुमानजी ने एक ही मुलाकात में विभीषण को भी ढाढ़स बँधाई, स्नेहभरी सांत्वना दी और प्रभु की महानता के प्रति अहोभाव से भर दिया। श्री हनुमानजी कहते हैं :

सुनहु बिभीषन प्रभु कैरीती।
करहिं सदा सेवक पर प्रीती॥

''विभीषणजी सुनो ! तुम बोलते हो हमारा तामस शरीर है। हम दाँतों के बीच रहनेवाली जिह्वा जैसे हैं। हमारा कैसा जीवन है ? हम प्रभु को कैसे पा सकते हैं ? तो निराश होने की, घबराने की जरूरत नहीं है, भैया ! भगवान सेवक पर प्रीति करते हैं। फिर सेवक पढ़ा है कि अनपढ़ है, धनी है कि निर्धन है, माई है कि भाई है - यह नहीं देखते। जो कह दे कि 'भगवान ! मैं तेरी शरण हूँ।' बस, प्रभु उसे अपना सेवक मान लेते हैं।

"विभीषणजी सुनो ! तुम बोलते हो हमारा तामस शरीर है। हम दाँतों के बीच रहनेवाली जिह्वा जैसे हैं। हमारा कैसा जीवन है ? हम उन्हें कैसे पा सकते हैं ? तो निराश होने की, घबराने की जरूरत नहीं है, भैया !"

कहहु कवन मैं परम कुलीना।
कपि चंचल सबहीं बिधि हीना॥
अस मैं अधम सखा सुनु मोहू पर रघुबीर।

मैं कौन-सा कुलीन हूँ ? हमारे में ऐसा कौन-सा गुण है परंतु भगवान के सेवक होनेमात्र के भाव से भगवान ने हमें इतना ऊँचा कार्य दे दिया, ऊँचा पद दे दिया।''

कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर॥

भगवान के गुणों का सुमिरन करते-करते हनुमानजी की आँखें भर आती हैं। कैसे उत्तम सेवक हैं हनुमानजी कि जो उनके सम्पर्क में आता है, उसको अपने प्रभु की भक्ति देते-देते स्वयं भी भक्तिभाव से आँखें छलका देते हैं, अपना हृदय उभार लेते हैं।

हनुमानजी अशोक वाटिका में सीताजी के पास जाते हैं। सीताजी पहली बार मिले हुए हनुमानजी पर, वह भी जो वानर रूप में हैं कैसे विश्वास करें ? फिर भी हनुमानजी का ऐसा मधुर व्यवहार, ऐसी विश्वास-संपादन करने की कुशलता कि -

कपि के बचन सप्रेम सुनि उपजा मन बिस्वास।

उन्होंने हनुमानजी के प्रेमयुक्त वचन सुने और उन्हें विश्वास हुआ कि 'हाँ, ये रामजी के ही दूत हैं।'

जाना मन क्रम बचन यह कृपासिंधु कर दास॥

'ये मन से, कर्म से, वचन से कृपासिंधु भगवान राम के ही दास हैं।' ऐसा उनको जाना।

मन संतोष सुनत कपि बानी।
भगति प्रताप तेज बल सानी॥

और सीताजी के मन में संतोष हुआ।

आपकी वाणी से किसीका आत्मसंतोष नहीं बढ़ा तो आपका बोलना किस काम का ? आपकी वाणी से किसीकी योग्यता नहीं निखरी, किसीका दुःख दूर न हुआ, किसीका अज्ञान-अंश नहीं घटा और ज्ञान नहीं बढ़ा तो आपका बोलना व्यर्थ हो गया।

हनुमानजी कहते हैं कि हम बंदर हैं, फिर भी सबसे ज्यादा बड़भागी हैं।

हम सब सेवक अति बड़भागी।
संतत सगुन ब्रह्म अनुरागी॥

यहाँ हनुमानजी की सरलता और प्रभु-तत्त्व को पहचानने की बुद्धिमत्ता का दर्शन होता है। निर्गुण-निराकार ब्रह्म आँखों से दिखता नहीं है और सगुण-साकार कभी-कभी अवतरित होता है। हनुमानजी कहते हैं : ''हम भक्तिमार्ग पर चलकर भगवान के सेवाकार्य



करते हुए भगवत्स्वरूप की यात्रा कर रहे हैं और हम भगवान के पास नहीं गये, भगवान स्वयं चलकर हमारी ओर आये, इसलिए हम अति बड़भागी हैं।

राम काज कारन तनु त्यागी।
हरि पुर गयउ परम बड़भागी ॥

जटायु राम-काज में तन छोड़कर हरि के धाम में गये। प्रभुसेवा में देह-उत्सर्ग करनेवाले जटायु परम बड़भागी हो सकते हैं। अहिल्या बड़भागी हो सकती है, कोई भाग्यशाली हो सकते हैं परंतु हम तो अति बड़भागी हैं।''

हनुमानजी ने सुग्रीव पर, विभीषण पर उपकार किया, उन्हें रामजी से मिला दिया, राज्य पद दिला दिया। वे राज करनेवालों में से नहीं थे, राज्य दिलानेवालों में से थे। यश लेनेवालों में से नहीं थे, हनुमानजी यश दिलानेवालों में से थे। वे सेवा करानेवालों में से नहीं थे, सेवा करनेवालों में से थे; सुख लेनेवालों में से नहीं थे, सुख देनेवालों में से थे; मान लेनेवालों में से नहीं थे, मान देनेवालों में से थे।

काश ! हम भी ये गुण अपने में लाना चाहें। इसमें क्या कठिनाई है ? क्या जोर पड़ता है ? मन को समझायें और मंगलमय हनुमानजी का मंगलकारी चरित्र बार-बार पढ़ें-पढ़ायें। एकटक उनकी ओर देखें और भावना करें कि महाराज ! ये सद्गुण हम अपने में भरें, अपने चित्त को पावन करें।

जय जय जय हनुमान गोसाईं।
कृपा करहु गुरुदेव की नाईं ॥

महाराज ! गुरुदेव की नाईं कृपा करो महाराज... हनुमानजी महाराज...।

'हनुमान जयंती' के महापर्व पर हनुमानजी के सद्गुण हम लोगों के चित्त में फलें-फूलें।

''हनुमान ! तुमने तो मेरे को अच्छी बात सुनायी। जैसे जयंत के पीछे प्रभु श्रीराम ने बाण छोड़ा था और उसके छक्के छुड़ा दिये थे कि 'जयंत ! कौए के रूप में सीता के पैर को चोंच मारने का क्या फल होता है, देख।' किंतु रावण मुझे उठाकर ले आया और प्रभु ने मेरे को भुला दिया, इस बात से मैं व्यथित थी। परंतु हनुमान ! तुमने मुझे यह बताकर कि 'माताजी ! आपकी सेवा में प्रभु ने हनुमानरूपी तीर को छोड़ा है।' मेरा भ्रम मिटा दिया, संदेह मिटा दिया।'' - ऐसा कहकर सीताजी हनुमानजी की प्रशंसा करती हैं तो हनुमानजी दूर से चरणों में लेटते हुए बोले : ''पाहिमाम् ! रक्षमाम् ! मातेश्वरी ! जो प्रभु चाहते हैं वह तो पहले से ही होना था। माँ ! आप सब कुछ जानती हैं और मेरी सराहना कर रही हैं ? पाहिमाम् रक्षमाम् !''

यह हनुमानजी का कितना बड़ा सद्गुण है, कितनी सरलता है, कितनी बुद्धिमत्ता है ! आप हनुमानजी की इस बुद्धिमत्ता को, सरलता को, सहजता को जीवन में उतारने की कृपा करें तो आपके शुभ संकल्प का बल बढ़ जायेगा।

एको ब्रह्म द्वितीयोनास्ति, नेह नानास्ति किञ्चन।

'अद्वैत एक ब्रह्म के सिवाय और कुछ नहीं है।'

(त्रिपाद्विभूतिमहानारायणोपनिषद् : ३.२

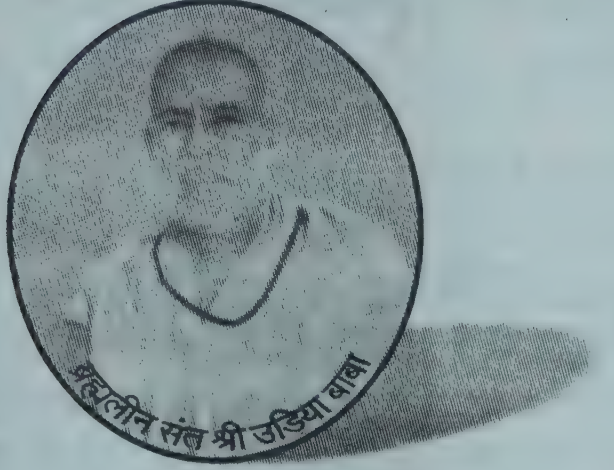
ऐसा कहनेवाले अद्वैतवादी आद्य शंकराचार्यजी ने भी पंचश्लोकी 'श्री हनुमत्पंचरत्न स्तोत्र' में हनुमानजी के बारे में क्या सुंदर वर्णन किया है ! शंकराचार्यजी ने कहा है : जो भगवान श्रीराम और सीताजी का चिंतन कर हृदय से पुलकित हो जाते हैं, जिनके कर्म सुंदर हैं, जिन्होंने सत्कर्म, परोपकार से कर्मों को कर्मयोग बना लिया है, ऐसे श्री हनुमानजी का सुमिरन करके मैं भी उन्हें स्नेह करता हूँ और उनका ध्यान धरता हूँ।

आद्य शंकराचार्य भगवान जिनका ध्यान धरते हैं उन हनुमानजी को अगर आप और हम मिलकर मन-ही-मन प्रसन्न करना चाहें तो कैसे करें ? हनुमानजी खुशामद प्रिय नहीं हैं, वे राम प्रिय हैं। तो आप क्या करोगे ? आप राम का भजन करो। आप राम के प्यारे हुए तो हनुमानजी आपको अपने-आप प्यार करने लगेंगे।

अन्तर्यामी राम की प्रसन्नता के लिए लोककार्य करो, लोगों से मिलो और विश्रांति लोकेश्वर में पाओ, अपने आत्मा-राम में आराम पाओ। कर्म सुख लेने के लिए नहीं, देने के लिए करो। कर्म मान लेने के लिए नहीं, देने के लिए करो तो तुम्हारा कर्म कर्मयोग, भक्तियोग हो जायेगा।

हनुमन्तजी मेरे प्यारे हैं, दिल के दुलारे हैं, आप भी उनके दुलारे हो जायेंगे।

(शेष पृष्ठ १३ पर)



ब्रह्मज्ञानी संतों की समता व उदारता

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

उड़िया बाबा बैठे थे तो एक दंडी संन्यासी आकर बोलने लगा : ''तुम भ्रष्ट हो। ऐसे हो, वैसे हो... जहाँ-तहाँ बैठे रहते हो। साधु होकर ऐसा करते हो, वैसा करते हो...''

अब उन महापुरुष की बुद्धि तो भगवान में प्रतिष्ठित हो गयी थी। उनके लिए सब ब्रह्ममय, सब चिद्घन चैतन्य है; कोई बुरा नहीं, कोई पराया नहीं। वे एकांत में रहते थे लेकिन कहीं भीड़ हो जाती और वहाँ वे होते तो 'उन लोगों को भीड़-भाड़ में, विषयानंद में, उनकी तकड़धिन में भी आनंद आ रहा है, विक्षेप में भी वे आनंद मना रहे हैं तो अपन काहे को विक्षिप्त रहें ? अपन भी अपने आनंदस्वरूप में मस्त रहें।' ऐसा सोचकर वहीं पड़े रहते।

संन्यासी बोला : ''लोग यहाँ नाच रहे हैं, शोर-गुल कर रहे हैं और तुम यहीं ऐसे ही पड़े रहते हो।''

उसने खूब सुनाया तो उड़िया बाबा को माननेवाले लोगों को भी गुस्सा आया कि 'हम इस साधु को जरा सुना दें।' तब उड़िया बाबा ने कहा : ''देखो, इनको कोई कुछ भी बोलेगा तो मैं इस प्रदेश में से चला जाऊँगा। फिर कभी यहाँ पैर नहीं रखूँगा। इनको बोलने दो।'' तो कोई बोला नहीं। वह संन्यासी उनके बारे में कुछ-का-कुछ बोलता रहा, सुनाता रहा परंतु उड़िया बाबा ने उसका कोई विरोध नहीं किया। कैसी समता !

वह संन्यासी जब मरने को था तो उसको पश्चात्ताप हुआ कि 'मैंने ऐसे बड़े संत का, जो समता में टिके हैं, भक्तों के बीच इतना अपमान किया फिर भी वे कुछ नहीं बोले। अब मेरी क्या गति होगी ?'

उसने अपने चेलों को भेजा कि 'मैं नहीं जा सकता हूँ, अतः उड़िया बाबा को बुलाओ। मैं उनके चरण छूऊँगा, माफी माँग लूँगा।'

उड़िया बाबा के पास खबर आयी तो वे उससे मिलने चले कि 'चलो भाई ! चलें। वे पश्चात्ताप कर रहे हैं, अच्छा है। उनका भाव शुद्ध हो गया है।' उड़िया बाबा के उसके पास पहुँचने से पहले ही वह मर गया। वैसे उड़िया बाबा किसीकी श्मशान यात्रा में नहीं जाते थे परंतु उसकी श्मशान यात्रा में गये। लोगों के बीच जिसने गालियाँ दीं उसकी श्मशान यात्रा में जाना... कैसी करुणा, कैसी उदारता ! शत्रु के प्रति भी कितना शुभ भाव !

धन्य हैं समता के धनी ब्रह्मवेत्ता संत और धनभागी हैं उनके चरित्र पढ़ने-सुननेवाले।

आप अपने सम्पर्क में आनेवालों के प्रति समता का गुण लाओगे न ? बहनो, भाइयो, देवियो ! संसार सपना है, इसमें मान-अपमान की गाँठ काहे बाँधे रहो ? राग-द्वेष और मान-अपमान की गाँठें खोल दो न ! खोलोगे न मेरे प्यारे, संतों के दुलारे ! ॐ... ॐ...

आप चाहते तो हैं धन और लगाते हैं समाधि तो भला बताइये, समाधि से क्या चाँदी-सोना बरसेगा ! वह तो निवृत्ति का मार्ग है। इसलिए अधिकारी के संबंध में बिल्कुल स्पष्ट होना चाहिए।

आप किसकी प्रेरणा से और किसके लिए कर्म कर रहे हैं, दोनों बात विचार करने योग्य हैं।

(श्रीमद् आद्य शंकराचार्य जयंती : २ मई २००६



मैं कौन हूँ ?

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

एक बार श्रीमद् आद्य शंकराचार्यजी कश्मीर में पधारे ब्राह्मणों ने दर्शन आदि करके उनसे पूछा : ''आप त बोलते हैं कि हम ब्रह्म हैं, यह जीवात्मा ब्रह्म है परंतु हम तो नह समझ पाते कि हम ब्रह्म कैसे हैं ?''

''हे मूर्खो ! जब सुन-सुनकर ही अपने को जीव मानते हो तो जब शास्त्र और आत्मानुभवी संत बोलते हैं कि 'यह जीवात्मा परमात्मा का स्वरूप है'- तो यह क्यों नहीं मानते हो ?''

शंकराचार्यजी बोले : ''तो तुम क्या हो ?''

ब्राह्मणों ने कहा : ''हम तो जन्मने-मरनेवाले जीव हैं।''

''अच्छा, ऐसा मानने से अगर दुःख मिट गया हो, प्रभुप्राप्ति हो गयी हो तो माना करो। हमा पास समय नहीं है तुम्हारे साथ सिर खपाने का।''

''नहीं ! आप बताइये, हम जीव नहीं ब्रह्म कैसे हैं ?''

''मैं जीव हूँ - यह तुमने जाना कैसे ?''

''हमारे बाप-दादाओं ने सुनाया।''

''बाप-दादाओं ने कहाँ से सुना ?''

''उनके बाप-दादाओं से सुना।''

''उनके बाप-दादाओं ने कहाँ से सुना ?''

''उनको उनके बाप-दादाओं ने सुनाया।''

शंकराचार्यजी बोले : ''हे मूर्खो ! जब सुन-सुनकर ही अपने को जीव मानते हो तो जब शास और आत्मानुभवी संत बोलते हैं कि 'यह जीवात्मा परमात्मा का स्वरूप है'- तो यह क्यों नह मानते हो ?''

'मैं श्रीमाली ब्राह्मण हूँ', 'मैं त्रिवेदी हूँ', 'द्विवेदी हूँ', 'चतुर्वेदी हूँ', 'मैं जाट हूँ', 'मैं जाटण हूँ', ' पटेल हूँ', 'मैं पंजाबी हूँ' सुन-सुनकर यह पक्का हो गया है। भगवान श्रीकृष्ण 'गीता' में कहते हैं :

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।

'इस देह में यह सनातन जीवात्मा मेरा ही अंश है।'(१५.७)

'तुम सनातन हो' - श्रीकृष्ण की यह बात क्यों नहीं मानते हो ? उपनिषद् की यह बात क्यों नह मानते हो ? महारानी मदालसा ने अपने पुत्रों को पयपान कराते हुए ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया :

शुद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरंजनोऽसि संसारमायापरिवर्जितोऽसि।

संसारस्वप्नं त्यज मोहनिद्रां मदालसा वाक्यमुवाच पुत्रम्

हे पुत्र ! तू शुद्ध है, बुद्ध है, निरंजन है, संसार की माया से रहित है। यह संसार स्वप्नमात्र है। उ

जाग, मोहनिद्रा का त्याग कर। तू सच्चिदानंदस्वरूप आत्मा है।

'मैं फलाने का लड़का हूँ, फलाना हूँ' इस मोह में मत पड़ना बेटा! अपने शुद्ध स्वरूप की स्मृति जगाना।

मजहबवादी बोलेंगे : 'तुम हमारे मजहब के हो।' पार्टीवादी बोलेंगे : 'तुम हमारी पार्टी के हो। अतः हमारी पार्टी का डिमडिम चालू रखो।' पत्नी कहेगी : 'तुम मेरे पति हो। खिलाना-पिलाना तुम्हारा कर्तव्य है।' पुत्र बोलेगा : 'हमें पैतृक सम्पत्ति दे जाना तुम्हारा कर्तव्य है।' मित्र बोलेगा : 'हमारे काम आना तुम्हारा कर्तव्य है।' किंतु भगवान और भगवत्प्राप्त महापुरुष बोलेंगे : 'हे जीव! तू ईश्वर का सनातन अंश है। अपने सनातन स्वभाव को पाकर मुक्त होना तेरा मुख्य कर्तव्य है।'

हे चेतन! तुम आत्मा हो और परमात्मा के अभिन्न अंश हो। जैसा तुम अपने को मानते हो, वैसे बन जाते हो क्योंकि तुम्हारा मन एक कल्पवृक्ष है। अपने को जातिवाला मानते हो तो जातिवाले बन जाते हो। अपने को पंथवाला मानते हो तो पंथवाले बन जाते हो। तुम्हारा चित्त अपने को जैसा मानता है, देर-सवेर वैसा ही अनुभव करता है। ये मान्यताएँ चित्त से होती हैं, मन से होती हैं; मान्यताओं का जो आधार है वह चैतन्य, मान्यताओं का जो साक्षी है वह द्रष्टा-असंग पुरुष ही तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है।

लहर तुम्हारा वास्तविक स्वरूप नहीं, पानी तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है। यह गहने की आकृति (शरीर) तुम्हारा वास्तविक स्वरूप नहीं, सोना (आत्मा) तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है। यह घटाकाश, घड़ा तुम्हारा वास्तविक स्वरूप नहीं लेकिन महाकाश तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है। घड़े के जल में आया हुआ चंद्रमा का प्रतिबिंब या हिलनेवाला, ठंडा-गर्म होनेवाला जल तू नहीं। मटके की आकृति में आया चाँद तू नहीं। तू तो वह चाँद है :

चांदणा कुल जहान का तू,
तेरे आसरे होय व्यवहार सारा।
तू सब दी आँख में चमकदा,
हाय चांदणा तुझे सूझता अँधियारा॥
जागणा सोणा नित ख्वाब तीनों,
होवे तेरे आगे कई बारा।
बुल्लाशाह प्रकाश स्वरूप है,
इक तेरा घट-वध न होवे यारा॥

तू ऐसा प्रकाशस्वरूप है। जाग्रत आया, चला गया। स्वप्न आया, चला गया। गहरी नींद आयी, चली गयी। दुःख आया, चला गया। सुख आया, चला गया। मान आया, चला गया। अपमान आया, चला गया। मित्र का भाव आया, चला गया। शत्रु का भाव आया, चला गया। भय का भाव आया, वह भी चला गया। तू तो वही अचल आत्मा है। कह दे **'सोऽहम्'** - वह मैं हूँ। हरि ॐ... ॐ... ॐ... अपनी चेतना को जगा। अपने असली स्वभाव को जगा। हरि ॐ... अपनी प्रेमभरी आत्मनिगाह को जगा। कोई भी कार्य उद्वेग में आकर नहीं करेंगे क्योंकि अनेकों शरीरों में मैं ही छुपा हूँ। ॐ... ॐ...

(पृष्ठ १० का शेष) अगर शरीर अस्वस्थ हो तो दाँये-बाँये नथुने से क्रमशः १० बार श्वास लो-छोड़ो। फिर दोनों नथुनों से श्वास लेकर करीब १ मिनट तक रोकते हुए मन-ही-मन दुहराओ-

नासै रोग हरे सब पीरा। जपत निरंतर हनुमत बीरा॥

फिर श्वास छोड़ो। अब २-३ श्वास स्वाभाविक लो, फिर श्वास बाहर छोड़ो और ४० सेकेंड बाहर रोकते हुए दुहराओ-

नासै रोग हरे सब पीरा। जपत निरंतर हनुमत बीरा॥

पवनसुत का मंत्र और पवन को रोकना। हनुमानजी और हनुमानजी के पिता वायुदेव की कृपा का चमत्कार आप देख लेना।

जो भोले-भाले लोगों को बहकाते हैं कि हनुमानजी एक बंदर हैं, पशु हैं, वे भी अगर ईमानदारी से उनकी शरण हो जायें तो हनुमानजी की प्रत्यक्ष कृपा का अनुभव कर सकते हैं और फिर वे आरोग्यता का दान लेकर, अपने गले से क्रास का चिन्ह हटाकर सुन्दर, सुखद, विनयमूर्ति, प्रेममूर्ति, पुरुषार्थमूर्ति, सज्जनता तथा सरलता की मूर्ति श्री हनुमानजी को ही गले में धारण करेंगे।

श्री हनुमानजी को बंदर कह कर भारत की संस्कृति पर आस्था रखनेवालों के प्रति अपराध करनेवालो! तुम्हारे अपराध के फलस्वरूप रोग, पीड़ा, अशांति आती है। अतः सावधान हो जाओ।

श्री रामजी और हनुमानजी की कृपा आप भी पाइये। भारतवासियों को धर्मान्तरित मत कीजिये। आप इस देव की शरण आइये। इसीमें आपका भला है।

कर्म में इच्छा, वासना और अहंता मिलाते हैं तो कर्म तुच्छ हो जाते हैं।

(पूज्य बापूजी का अवतरण-दिवस : १९ अप्रैल २००६)



जन्म-कर्म दिव्य बनाइये

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः ।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन ॥

'हे अर्जुन ! मेरे जन्म और कर्म दिव्य अर्थात् निर्मल और अलौकिक हैं - इस प्रकार जो मनुष्य तत्त्व से जान लेता है, वह शरीर को त्यागकर फिर जन्म को प्राप्त नहीं होता, किंतु मुझे ही प्राप्त होता है।' **(गीता : ४.९)**

'मेरे जन्म और कर्म दिव्य हैं' - यह कहकर भगवान श्रीकृष्ण ने हमारे कर्मों को दिव्यता प्रदान करने का राजमार्ग खोल दिया। कैसे हैं वे कन्हैया !

भगवान राम हों, चाहे कृष्ण हों, चाहे कृष्ण और राम तत्त्व को पाये हुए महापुरुष हों, उनका हम जन्मदिवस मनाते हैं तो उससे हमें प्रेरणा मिलती है कि हाड़-मांस के शरीर के जन्मदिवस का महत्त्व नहीं है। जन्म तो उनका धन्य है जो अपने कर्मों के बंधन को काटते हैं। उनके जन्म को धन्यवाद है जिनके जन्म से और कर्मों से दूसरों के आँसू पोंछे जाते हैं, दूसरों के अंदर सुख और शांति का संचार होता है तथा उनके जन्म को धिक्कार है जो दूसरों का शोषण करके मरनेवाले शरीर को ऐश कराने के लिए देश-परदेश में नोटों की थप्पियाँ इकट्ठी करते हैं ! कइयों के पेट के खड्डे खाली पड़े हैं, कइयों के बच्चे पढ़ाई से वंचित हैं तो कइयों की माताएँ-बहनें उचित वस्त्र व पोषण से वंचित हैं और शोषक कलम के द्वारा, तरकीबों के द्वारा शोषण किये जा रहे हैं, किये जा रहे हैं; उनके जन्म को धिक्कार है, उनके कर्मों को भी धिक्कार है !

जन्मदिवस तो उन महापुरुषों का सार्थक है, जिनके जन्म से उनके कुल-खानदान का भला हुआ और लाखों लोगों के दिल में दिलबर की भक्ति का संचार हुआ। हमारा-तुम्हारा क्या जन्मदिवस ? हमारे-तुम्हारे जन्मदिवस की क्या बड़ी बात है ? वास्तव में तो जन्मदिवस हर्षित होने के लिए नहीं है, सावधान होने के लिए है कि आयुष्य के जितने वर्ष थे, उनमें से एक वर्ष कट गया। आयुष्य का एक पत्ता और गिर गया।

> **जन्मदिवस हर्षित होने के लिए नहीं है, सावधान होने के लिए है कि आयुष्य के जितने वर्ष थे, उनमें से एक वर्ष कट गया।**

जो मनुष्य उस सत्यस्वरूप परमात्मा में विश्रांति पाने का जन्मसिद्ध अधिकार लेकर आया है, वह 'मेरी इतनी पदवियाँ हैं, मेरे पास इतने पैसे हैं, मेरे पास इतने मकान हैं...' करके 'अहं' मे उलझ रहा है। बेवफा मकानों को पता ही नहीं कि हम किसके हैं ? पदवियों को पता ही नहीं कि हम किसकी हैं ? और 'अहं' कहता है : 'मेरी इतनी पदवियाँ हैं, मुझे इतने इनाम मिले हैं, मेरी इतनी गाड़ियाँ हैं, मेरी इतनी सत्ता है...' यो नहीं कहता है : 'मेरा सर्जनहार अन्तरात्मा होकर बैठा है, वह कब मिलेगा ?' अगर ऐसी ललक जग जाती है तो उसका जन्म सार्थक है।

जो सृष्टिकर्ता की प्रसन्नता के लिए अपने कर्मों को जनता जनार्दन की सेवा में और कर्मों के फल को भी उसीमें लगा देते हैं; अच्छे कर्म करते हैं और फल नहीं चाहते, भगवान की प्रसन्नता चाहते हैं; बुरे कर्मों से बचने के लिए भगवान को प्रार्थना करते हैं; गुरुमंत्र का आश्रय लेते हैं उनका जन्म सार्थक है बाकी तो रोज धरती पर करीब पौने दो करोड़ लोगों का जन्मदिवस होता है। इसमें क्या बड़ी बहादुरी हो गयी ?

'अथर्ववेद' में आता है :

सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो
ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति ।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं
लोकं पृथिवी नः कृणोतु ॥

इस संसार में वास्तविक उन्नति वे लोग करते हैं जो सत्कर्मी हैं, जो परमात्मा अथवा विद्वानों से प्रीति करते हैं, सज्जनों से, संतों से प्रीतिपूर्वक पेश आते हैं, बाकी के लोग अहं की उन्नति करते हैं कि 'मैं धनवान, मैं सत्तावान, मैं इनामवान, मैं फलानावान...'

अपने 'मैं' को नश्वर चीजों से बाँधना उन्नति नहीं है, अवनति है । आप तो शाश्वत हैं और पदवी मिली है नश्वर ! आप पदवी से अपने को बड़ा मानते हैं तो आप अपने को घाटे में डाल रहे हैं। आप नित्य हैं और वस्तुएँ अनित्य हैं। आप अमर हैं, शाश्वत हैं और सत्ता, कुर्सी बदलनेवाली है । **बदलनेवाली चीजों को अपने में आरोपित करके जो बड़ा होता है, अपने को बड़ा मानता है वह अपने अहं को बड़ा करता है तथा अपने आत्मा का घात करता है लेकिन जो सत्पुरुषों का संग करता है वह इस गलती से बच जाता है।** इस गलती से बचने के कारण 'नाशवान के द्वारा अविनाशी को सुख मिल जायेगा' - यह भ्रम उसका टूट जाता है।

शरीर मरने के बाद भी मैं रहूँगा - ऐसी समझ आयी तो उसके कर्म दिव्य होने लगेंगे। कर्म के द्वारा वह अपने को बड़ा नहीं मानेगा । कर्म के द्वारा उसे दूसरों का दुःख दूर करने की सद्बुद्धि आ जायेगी। दूसरों का दुःख दूर करने की सद्बुद्धिवाले की अपनी दुःखाकार वृत्ति शांत हो जाती है । जो उत्पत्ति-विनाशशील वस्तुओं से राजी-नाराज होता है वह कर्मबंधन में फँसता है, वह अल्प मति है।

'सुखद परिस्थिति आयी तो क्या है ? चली जायेगी। दुःखद परिस्थितियाँ आयीं तो क्या हो गया ? चली जायेंगी पर उनको जाननेवाला मैं नित्य हूँ।'- इस तरह अपने नित्यस्वरूप की स्मृति करने से अहं बाधित होगा और आत्मप्रकाश होगा । अगर अनित्य को महत्त्व दिया तो अहं पुष्ट होगा और आत्मप्रकाश दब जायेगा । आत्मप्रकाश दबते ही जीव अधोगति का अधिकारी हो जाता है।

राजा नृग बड़े बुद्धिमान तो थे परंतु उन्होंने अपने धन, यौवन व सत्ता को अहं सजाने में लगाया और इस कारण दूसरे जन्म में गिरगिट हो गये। मिथिलानरेश राजा अज भी अजगर बन गये थे । कोई घोड़ा बन जाता है, कोई हाथी बन जाता है तो कई नीच योनियों में चले जाते हैं, कई प्रेत होकर भटकते रहते हैं... उन्होंने कर्मों को दिव्य बनाने की कला नहीं सीखी।

मनुष्य का जन्म तो दिव्य नहीं लेकिन वह भगवान के जन्म को दिव्य जाने और अपने कर्म भगवान की प्रेरणा से दिव्य बना ले तो जन्म-मरण से छूट जायेगा। इसलिए मनुष्य को हमेशा सज्जनों का, सत्पुरुषों का प्रयत्नपूर्वक संग करके अपने समझ और कर्मों को दिव्य बनाना चाहिए, उन्नत होते रहना चाहिए।

तुम काहे को गिड़गिड़ा रहे हो ? 'यह हो जायेगा, वह हो जायेगा...' सोचके क्यों सिकुड़ रहे हो ? वस्तुओं का आश्रय, पाप का आश्रय, कपट का आश्रय लेना माने भगवद्-आश्रय से दूर होना।

नश्वर चीजें और पद पाकर अपने को अवनति की खाई में न धकेलें। पद मिल जाय तो कोई हरकत नहीं, बाहर की उन्नति हो जाय तो कुछ बुरा नहीं, अच्छा है परंतु वह उन्नति आपका हृदय बिगाड़नेवाली, आपका जीवन, आपका 'स्व' बिगाड़नेवाली उन्नति न बने - इसका ध्यान रखें।

आप अमर हो, आत्मा हो, परमात्मा के अमर पुत्र हो और सुख-दुःख मरनेवाला है । आश्चर्य है कि अमर मरनेवालों से प्रभावित हो रहा है, नित्य चैतन्य अनित्य से दब रहा है, शाश्वत नश्वर के आगे घुटने टेक रहा है - बिक रहा है।

तुम परम पवित्र और महान ईश्वर के अमर पुत्र हो।

काहे को गिड़गिड़ा रहे हो ? 'यह हो जायेगा, वह हो जायेगा...' सोचके क्यों सिकुड़ रहे हो ? वस्तुओं का आश्रय, पाप का आश्रय, कपट का आश्रय लेना माने भगवद्-आश्रय से दूर होना । इन चीजों का आश्रय, अविनाशी होकर विनाशी चीजों का आश्रय लेकर निर्दुःख होना चाहते हो ?

सबसे बड़ा आश्रय यह है कि आप नित्य हैं, आपका आत्मा नित्य है । उसका आश्रय लें और उसमें आराम पायें, शांति पायें, उसके ध्यान में जायें। **ये उन्नति के दो महान सूत्र हैं । अपने अहं का आश्रय छोड़कर आत्मा का आश्रय लें, अनित्य का आश्रय छोड़कर नित्य का आश्रय लें और नित्य में सुख पायें** । नित्य में सुख पाने से आपका सामर्थ्य बढ़ जायेगा, आपकी आकर्षणी शक्ति बढ़ जायेगी, आपकी बुद्धिशक्ति विकसित हो जायेगी, आपका मन मधुर हो जायेगा, आपकी मधुर चितवन से लोगों के पाप-ताप मिटने लगेंगे। कर्मों के द्वारा आप ऐसे दिव्य बन जायेंगे।

जब मेरे करोड़-करोड़ दुःखी भारतवासियों के दुःख हरने का काम समिति के भाई करते हैं, मेरे द्वारा भगवान करवाते हैं तो मैं समझता हूँ- मेरा शरीर लेना सार्थक हो गया, मेरा श्वास लेना सार्थक हो गया।

कर्म करें, फिर विश्रांति पायें। आप अहं के आश्रित, राग के आश्रित, द्वेष के आश्रित होकर कर्म न करिये, भगवद्-आश्रित होकर कर्म करिये और बाद में भगवान में विश्रांति पाइये; जादुई काम हो जायेगा उन्नति का। आपके कर्म दिव्य हो जायेंगे।

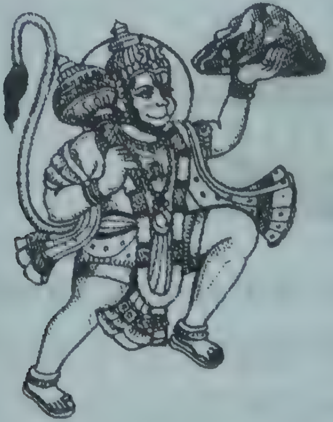
नित्य अवतार महापुरुषों के कर्म दिव्य होते हैं क्योंकि उन्हें बदले में कोई सुख लेना नहीं है, कर्म करके अपने को बड़ा बनाना नहीं है अथवा कर्म करके सुख भोगना नहीं है। महापुरुषों के कर्म हम लोगों के पाप-ताप मिटाने के लिए, हम लोगों को उन्नत करने के लिए होते हैं और वे बदले में नश्वर नहीं चाहते तो उनका चित्त तुरंत परमात्म-विश्रांति में चला जाता है। इसी कारण बहुत कुछ लुटाने के बाद भी उनके दिल का दरिया यों ही छलकता रहता है । वे कितना कुछ बाँटते हैं आशीर्वाद के द्वारा, परिश्रम के द्वारा, सेवा के द्वारा फिर भी उनके हृदय में वह दिव्य ज्ञानधारा, दिव्य सामर्थ्य, दिव्य आनंद आता रहता है। वे लोग बड़भागी हैं जो महापुरुषों का संपर्क करते हैं।

भगवान तथा भगवत्प्राप्त महापुरुष के कर्म दिव्य होते हैं और आम लोग भी अपने जीवन को, अपने कर्मों को दिव्य बना सकते हैं। कर्म में मलिनता तब आती है जब फल की इच्छा होती है, वासना होती है। इच्छा, वासन और अहंता मिलाते हैं तो कर्म तुच्छ हो जाते हैं। इच्छ मिटाने के लिए भगवत्प्राप्ति की इच्छा रख दो। वासन मिटाने के लिए भगवत्प्राप्ति की वासना रख दो तो वासन होते हुए भी वासना नहीं रहेगी और आपके कर्म दिव्य ह जायेंगे।

आज अमदावाद तो क्या, हिन्दुस्तान की ११७० समितियाँ और दूसरी उपसमितियाँ गरीबों को भोजन करा रही हैं, मुझे संतोष है। पौने आठ रुपये की नोटबुक विद्यार्थियों को पाँच रुपये में दे रही हैं, मुझे आनंद है । कहीं सत्संग हो रहे हैं, कहीं कीर्तन-यात्राएँ हो रही हैं। आज जन्मदिवस है इस निमित्त हम कोई उत्सव मनायें तो वह हमने कभी मनाया नहीं। परंपरा के अनुसार सत्संग होता है। आप लोग कुछ मनाते हो तो आपकी भावनाओं का आदर करते हुए थोड़ी देर के लिए यह हमने स्वीकार कर लिया। यह आपकी चीज आपको अर्पण, आपका भाव आपको अर्पण । मुझे तो खुशी तब होती है जब मेरे करोड़-करोड़ दुःखी भारतवासियों के दुःख हरने का काम समिति के भाई करते हैं, मेरे द्वारा भगवान करवाते हैं तो मैं समझता हूँ- मेरा शरीर लेना सार्थक हो गया, मेरा श्वास लेना सार्थक हो गया। इस शरीर का जन्मदिवस कब तक मनायेंगे ? सूक्ष्म शरीर और पाँच भूतों के शरीर के मेल को जन्म बोलते हैं तथा इनके वियोग को मृत्यु बोलते हैं। ऐसी तो लाखों-करोड़ों बार जन्म और मृत्यु की धारा आती रही पर अब आप अपने कर्मों को ऐसा दिव्य बनाइये कि आपका यह जन्म दिव्य हो जाय।

आप लौकिक कार्यों को इतनी बढ़ोतरी न दो कि अलौकिक ईश्वर छूट जाय । कर्म करो लेकिन फल की इच्छा, लोलुपता से नहीं, किसीको दुःख देकर सुखी होने की बेवकूफी से नहीं । आप कर्मों के प्रवाह को संसार की भलाई में लगाओ तो आप कर्ता होते हुए भी अकर्ता आत्म का आराम पाओगे। आपके कर्म दिव्य हो जायेंगे। आपके पुराने कर्मों का फल शांत हो जायेगा, नये कर्मों में कर्तापन नहीं रहेगा और आप भगवत्सत्ता के साथ एकाकार हो जाओगे।

इन्द्रिय-विजय ही जीवन की सबसे बड़ी विजय है।



...तो कामोत्तेजक वातावरण में भी ब्रह्मचर्य सहज

स्त्री-दर्शन में, विजातीय परिचय में हममें विकार उत्पन्न होता है क्योंकि विजातीय शरीर के बारे में हमको वैसी ही दृष्टि के संस्कार मिले हैं और वर्तमान में हमारी वही दृष्टि रही है । इसलिए विजातीय शरीर विकार-भाजन के स्वरूप में ही हमें दिखता है और हम विकारी बनते हैं। परंतु सही अर्थ में स्त्री-शरीर या पुरुष-शरीर विकारी विचार का कारण नहीं है, वह तो सिर्फ निमित्त है।

यदि स्त्री-शरीर ही विकार का कारण होता तो जिसके प्रति हम बहन की भावना रखते हैं, वैसी बहनों या सगी बहनों के प्रति भी हममें विकार उत्पन्न होता, परंतु ऐसा नहीं होता है। योगी पुरुष ने स्त्री शरीर-संबंधी अपने मानसिक संस्कार बदल दिये होते हैं और वे हमेशा जागृत होने से उन्हें किसी स्त्री से या वातावरण से विकार उत्पन्न नहीं होता है। क्योंकि कुछ समय सत्यस्वरूप की साधना करने से बुद्धि में सत्य का प्रकाश तो आ ही जाता है। बाह्य विकार बढ़ानेवाले वातावरण से और विकारी भावों से बचने के लिए जो सदा निर्विकार हैं उस परमेश्वर का चिन्तन, स्मरण और पुकार बढ़ा दीजिये । मन-इन्द्रियों के विवादों में मैं फिसलूँगा नहीं । मैं निर्विकारी नारायण का हूँ और वे मेरे हैं । 'मुझमें विकार है' - ऐसी गलती न करें तथा 'मैं अपने विकार मिटाता हूँ' - यह अहं न रखें।

श्री रामकृष्ण परमहंस माँ-माँ पुकारते थे। बाह्य और भीतरी सद्गुणों से सुंदर शारदा माँ के साथ रहते हुए भी वे संयम में सफल रहे। कितना सद्भाव ! एक बार संसारी लोगों की तरह विचार कर वे उनके पास गये और काली माता को माँ-माँ पुकारते ही भगवद्भाव में समाधिस्थ हो गये। स्त्री को या सारे जगत को वे तटस्थता से, साक्षीभाव से देखते हैं अथवा तो स्त्री या जगत के दृश्यों में वे चैतन्य को ही निहारते हैं।

इससे आप देख सकते हैं कि स्त्री-परिचय और विषम वातावरण में उत्पन्न मानसिक विकृति के पीछे मूल उपादान कारण अर्थात् सत्य कारण तो हमारे अंतर में निहित मलिन वृत्तियाँ ही हैं। उन मलिन संस्कारों को यदि प्रयत्नपूर्वक दूर किया जाय, स्त्री-दर्शन में बहन, माता या आत्म भाव स्थापित किया जाय तो बाहरी जगत संयम-साधना में हमें कभी भी, कहीं भी विक्षेपकारी नहीं बनेगा।

जैसे श्री रामकृष्ण शारदा माँ के साथ और गाँधीजी कस्तूरबा के साथ संयम में रहते थे। फिर भी शुरुआत में साधक को सात्त्विक वातावरण में, संयम में मददगार वातावरण का आश्रय लेना उचित ही है।

– श्री मलूकचंद शाह

'...पेट है, कब्रिस्तान नहीं'

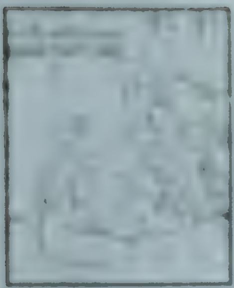
प्रसिद्ध साहित्यकार जॉर्ज बर्नाड शॉ को एक व्यक्ति ने दावत के लिए आमंत्रित किया। बुलानेवाला व्यक्ति मांसाहारी था, अतः शॉ ने उसको पहले ही बता दिया कि वे मांसाहारी भोजन नहीं करेंगे।

जब शॉ उसके यहाँ भोजन करने गये तो देखा कि शाकाहारी भोजन की भी व्यवस्था है। वे शाकाहार की मेज पर रखे सलाद को बड़े चाव से खाने लगे। तभी एक मांसाहारी सज्जन ने उन पर व्यंग्य कसते हुए कहा :

''जनाब ! मुर्गा खाइये, मुर्गा ! यह घास-फूस क्यों चर रहे हैं ?''

शॉ ने हाजिरजवाबी का परिचय देते हुए कहा : ''यह मेरा पेट है, कोई कब्रिस्तान नहीं।''

यह सुनकर उन सज्जन से जवाब देते न बना।



स्नेह है मधुर मिठास

सारी सृष्टि का आधार है सर्वव्यापक परमेश्वर और उसकी बनायी इस सृष्टि का नियामक, शासक बल है स्नेह, विशुद्ध प्रेम। निःस्वार्थ स्नेह यह सत्य, धर्म, कर्म सभीका शृंगार है अर्थात् ये सब तभी शोभा पाते हैं जब स्नेहयुक्त हों।

जीवन का कोई भी रिश्ता-नाता स्नेह के सात्त्विक रंग से वंचित न हो। भाई-बहन का नाता, पिता-पुत्र का, माँ-बेटी का, सास-बहू का, पति-पत्नी का, चाहे कोई भी नाता क्यों न हो, स्नेह की मधुर मिठास से सिंचित होने पर वह और भी सुंदर, आनंददायी एवं हितकारी हो जाता है।

विदेशियों जैसे 'She is my mother in law' कहनेवाली बहुएँ अपने पावन रिश्ते में कायदे-कानून को घसीटकर इसे कानूनी रिश्ता बना देती हैं।

आज हमारा दृष्टिकोण बदल रहा है। टी.वी. के कारण हम लोगों पर आधुनिकता का रंग चढ़ गया है। रहन-सहन, खान-पान की शैली कुछ और ही हो गयी है। स्वार्थ की भावना, इन्द्रियलोलुपता, विषय-विकार, स्वार्थ और संसारी आकर्षण की भावना बढ़ रही है। जो नाश हो रहा है उसीकी वासना बढ़ रही है। बड़ों के प्रति आदर और आस्था का अभाव हो रहा है। व्यक्ति कर्तव्य-कर्म से विमुख होता जा रहा है। सुख-सुविधा, भोग-संग्रह, मान-बड़ाई में मारे-मारे फिर रहे हैं। ऐसों का मान-बड़ाई टिकता नहीं। श्री रामकृष्ण, रमण महर्षि जैसों का मान-बड़ाई मिटता नहीं। परमार्थ-पथ का पता ही नहीं है, अतः एक-दूसरे को नीचा दिखाने की होड़ लगी हुई है। ईर्ष्या, भेद-भावना बढ़ गयी है।

हम अपना देखने का दृष्टिकोण बदल दें तो हमारे लिए यह सारा संसार स्वर्ग से भी सुंदर बन जाय। अपने-पराये का भेद मिट जाय, मेरे-तेरे की भावना विलीन हो जाय और सुख का साम्राज्य छा जाय। हम सबको स्नेह दें, सबका मंगल चाहें। तिलांजलि दें परदोष-दर्शन को। किसीके हित की भावना से उसके दोष देखकर उसे सावधान करना अलग बात है किंतु दूसरों को सुधारने की धुन में हम खुद पतन की खाई में न गिरें, इसका ख्याल रहे।

परिवार के सदस्यों में पारस्परिक संबंध, कैसे होने चाहिए, इसके विश्लेषण के लिए सास-बहू का ही रिश्ता लें।

सास का कर्तव्य है कि बहू को बेटी जैस स्नेह दे। बहू माँ-बाप का घर छोड़कर आयी है। ससुराल में भी अपने मायके जैसा ही अनुभव परायापन न लगे ऐसा उसके साथ स्नेहमय व्यव करें। उसकी कमीबेशियों को डाँटकर नहीं प्या समझाये। बहू आने के बाद घर की जिम्मेदारी सौंपकर केवल एक मार्गदर्शिका की भूमिका निभ ढलती उम्र में भी अपना अधिकार बनाये रखने कोशिश न करें। सांसारिक बातों-व्यवहारों विरक्त होकर भगवद्-आराधन, सत्संग-श्रव समय बितायें। भगवान श्रीराम की माता कौशल्य का आदर्श सामने रखकर परलोक सँवारने का करे।

बहू का कर्तव्य है कि सास को अपनी मँ समझे, 'माँ' कहकर पुकारे। विदेशियों जैसे 'Sh my mother in law.' कहनेवाली बहुएँ अपने पावन रिश्ते में कायदे-कानून को घसीटकर कानूनी रिश्ता बना देती हैं। फिर उन्हें अपनी सास माँ के प्यार की आशा भी नहीं रखनी चाहिए। दूसरों से स्नेह चाहते हैं तो पहले हमें दूसरों से स्नेह आचरण करना चाहिए। बहू घर के कार्यों में सा ससुर की सलाह ले, अन्य बुजुर्गों की सलाह ले। इ उनके प्रदीर्घ अनुभव का लाभ उसे मिलेगा। बड़ आदरयुक्त व्यवहार करें, उन्हें सम्मान दे और को स्नेह दें। रसोई बनाते समय घर के सभी सदस्य स्वास्थ्य को महत्ता दें व रुचिकर, ऋतु-अनुकू प्रकृति-अनुकूल भोजन बनायें।

सास-बहू दोनों का कर्तव्य है कि बच्चों उत्तम संस्कार दें। अपनी पावन संस्कृति सनातन धर्म के अनुसार उचित-अनुचित की शि दें। अपनी भारतीय संस्कृति की हितकारी, पा

परम्पराओं को नष्ट न होने दें, आदरपूर्वक उनका पालन करें और आगे की पीढ़ियों को उनकी महत्ता बताकर यह धरोहर आगे बढ़ायें।

घर आनेवाले व्यक्ति का मीठे वचनों से स्वागत करें। प्रसन्नता व मीठे, हितकारी वचनों से किया गया स्वागत फूल-हारों एवं मेवे-मिठाइयों से किये गये स्वागत से कई गुना श्रेष्ठ होता है। मधुर वाणी बोलने में हमारा जाता क्या है ? रुखे या कटु शब्दों से दूसरों के हृदय को दुःख पहुँचता है और मीठे वचनों से सुख।

व्यक्तिगत इच्छा को नहीं सद्भाव को पोषण दें। अपने-अपने कर्तव्य का तत्परता से पालन करें और स्नेह की मधुर मिठास छलकाते जायें। ऐसा करने से आपसी मनमुटाव, स्वार्थ-भावना मिट जायेगी और घर-बाहर का सारा वातावरण मधुमय, स्नेहमय हो जायेगा। मन निर्मल, आनंदमय हो जायेगा।

वशीकरण-मंत्र 'प्रेम' है, जो मनुष्य को ऊँची मंजिल तक ले जाता है। सच्ची-ऊँची मंजिल क्या है ? अपने प्रेम को पारिवारिक प्रेम के दायरे से बाहर निकालकर व्यापक बनाते हुए वैश्विक प्रेम में, भगवत्प्रेम में परिणत करना।

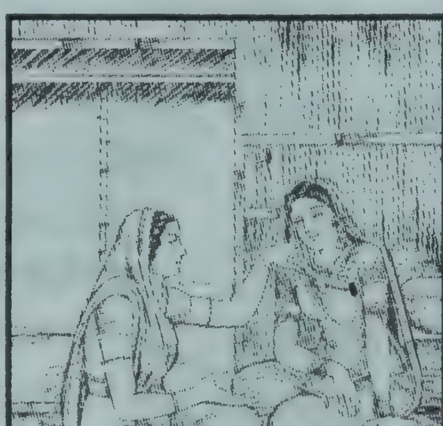
अपने कर्तव्य का तत्परतापूर्वक पालन और दूसरे के अधिकारों की प्रेमपूर्वक रक्षा - यही पारिवारिक व सामाजिक जीवन में उन्नति का सूत्र है। और भी स्पष्ट रूप से कहें तो 'अपने लिए कुछ न चाहो और भगवद्भाव से दूसरों की सेवा करो।' यही पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय और वैश्विक उन्नति का महामंत्र है। क्या आप इसका आदर कर इसे अपने जीवन में उतारेंगे ? **यदि हाँ तो आपका जन्म-कर्म दिव्य हो ही गया मानों।**

जब सास बन गयी माँ

एक बुढ़िया का स्वभाव था कि जब तक वह किसीसे लड़ न लेती, उसे भोजन नहीं पचता था। बहू घर में आयी तो बुढ़िया ने सोचा, 'अब घर में ही लड़ लो, बाहर किसलिए जाना ?' अब वह बात-बात पर बहू को जली-कटी सुनाती : ''तुम्हारे बाप ने तुम्हें क्या सिखाया है ? माँ ने क्या यही शिक्षा दी है ? अरी, बोलती क्यों नहीं ? तेरे मुँह में जीभ नहीं है क्या ?''

बहू चुप साधे सुनती रहती और मुस्करा देती। पड़ोसी सुनकर सोचते : 'यह कैसी सास है !'

बहू को चुप देखके सास कहती : ''अरी ! धरती पर पाँव पटकें तो भी धप की आवाज आती है और मैं इतना बोलती हूँ फिर भी तू चुप रहती है ?''



यह सब देखकर एक पड़ोसिन बोली : ''बुढ़िया ! लड़ने का इतना ही चाव है तो हमसे लड़ ले, तेरी इच्छा पूरी हो जायेगी। इस बेचारी गाय को क्यों सताती है ?''

तभी बहू ने पड़ोसिन को नम्रतापूर्वक कहा : ''इन्हें कुछ मत कहो मौसी ! ये तो मेरी माँ हैं। माँ बेटी को नहीं समझायेगी तो और कौन समझायेगा ?''

सास ने यह बात सुनी तो पानी-पानी हो गयी। उस दिन से बहू को उसने अपनी बेटी मान लिया और झगड़ा करना छोड़कर प्रेम से रहने लगी।

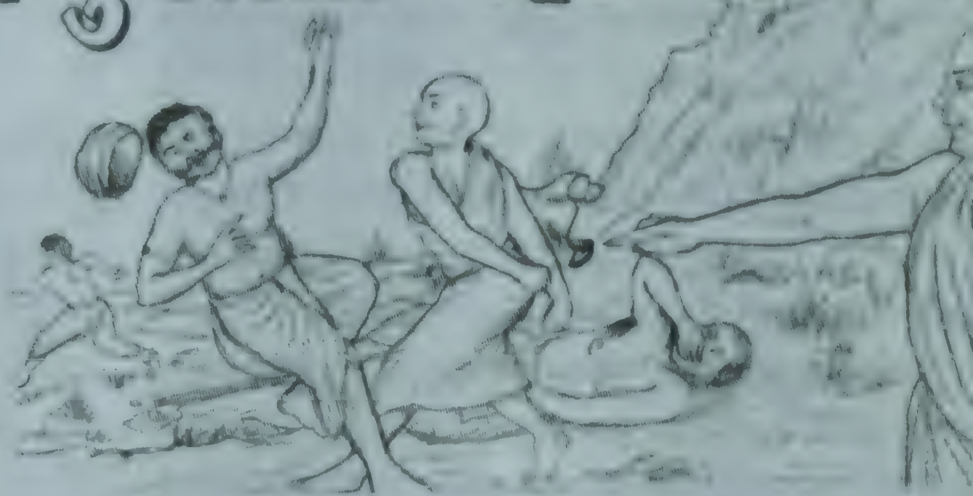
यह बहू की सहनशक्ति, सास के प्रति सद्भाव और मातृत्व की भावना का ही कमाल था कि उसने सास का स्वभाव बदल दिया।

सास-बहू के जोड़े में चाहे सास का स्वभाव थोड़ा ऐसा-वैसा हो चाहे बहू का, परंतु दूसरा पक्ष थोड़ा सूझबूझवाला, स्नेही हो तो समय पाकर उसका स्वभाव अवश्य बदल जाता है और घर का वातावरण मंगलमय हो जाता है।

हे भारत की माताओ-बहनो-देवियो ! आप अपने और परिवार के सदस्यों की जीवन-वाटिका को सुंदर-सुंदर सद्गुणोंरूपी फूलों से महका सकती हो। आपमें ऐसा सामर्थ्य है कि आप चाहो तो घर को नंदनवन बना सकती हो और उन्नति में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती हो।

यदि सास-बहू में अनबन रहती हो तो सास और बहू का प्यार दर्शाती हुई तस्वीर घर में दक्षिण व पश्चिम दिशा के मध्य के कोने में लगा दें। धीरे-धीरे सास और बहू में प्यार बढ़ता जायेगा।

अहिंसा का अर्थ दुर्बलता नहीं



'दैवो दुर्बल घातकः।' बलहीनों के लिए दैव भी घातक बन जाता है। शेर की कभी बलि नहीं दी जाती, बकरा ही बलि की भेंट चढ़ता है।

आचार्य मध्व बद्रीनाथ की यात्रा पर जा रहे थे, साथ में संन्यासी शिष्य भी थे। अचानक डाकुओं की एक टोली ने उनके समूह को घेर लिया। डाकू संख्या में अधिक न थे परंतु उनके हाथों में कुल्हाड़ियाँ आदि थीं। शिष्यों के पास प्रतिकार करने का कोई साधन नहीं था। डाकुओं ने उन पर हमला बोल दिया। उन्होंने सोचा कि 'ये तो बेचारे निहत्थे हैं, अभी मात खा जायेंगे।'

आचार्य मध्व ने मंद-मंद मुस्काते हुए अपने शिष्य उपेन्द्रतीर्थ को ललकारा : ''उपेन्द्र ! क्या देखते हो ? तुम्हारे साथियों पर आपत्ति आयी है और तुम खड़े-खड़े मुँह ही ताकते रहोगे ? संन्यास-साधुताई का अर्थ कायरता नहीं है। तुमने जिन हाथों से संन्यास का यह दण्ड पकड़ा है, उनमें कुल्हाड़ी पकड़ने का भी सामर्थ्य चाहिए।''

मध्वाचार्य का यह शिष्य निःशस्त्र प्रतिकार करने की कला में माहिर था। उसके दाँव-पेंच व फुर्तीलेपन से स्वामी मध्व परिचित थे।

गुरु का आदेश मिलते ही उपेन्द्र ने गजब की फुर्ती के साथ एक ही बार में एक डाकू की नाक तोड़ डाली। वह लहूलुहान होकर गिर पड़ा। दूसरे को ऐसी मार लगायी कि वह पहाड़ी से लुढ़कता हुआ नीचे खाई में जा गिरा। अब तो उपेन्द्र ने लपककर एक डाकू से कुल्हाड़ी भी छीन ली। उसके हाथ में कुल्हाडी देखकर डाकू त्राहिमाम् पुकार उठे। अपने सखा उपेन्द्र को डाकुओं पर भारी पड़ता देख अन्य शिष्यों का उत्साह भी दुगना हो गया। सबने मिलकर डाकुओं को ऐसा मजा चखाया कि वे सिर पर पाँव रखकर भाग गये। उन्हें लेने के देने पड़ गये। चौबेजी आये थे छ[illegible] बनने पर दूबे भी न रहे। डाकुओं को माल तो क्या मिलत[illegible] कुल्हाड़ियों से भी हाथ धोना पड़ा!

यह घटना **'शठे शाठ्यं समाचरेत्'** - 'जैसे [illegible] तैसा' की उक्ति को चरितार्थ करती है। **'अहिंसा पर[illegible] धर्मः'** इस धर्मसूत्र को माननेवाले आचार्य मध्व अहिं[illegible] को उसके विकृत रूप में नहीं लेते थे। वे जानते थे [illegible] दुर्बलता तो हिंसा को न्यौता देती है, उकसाती है[illegible] अहिंसा का पालन करने व करवाने के लिए भी शक्[illegible] आवश्यक है।

हमें अपने देश के इन महान आचार्य श्री मध्व [illegible] विचारों का आदर करना चाहिए व बलोपासना की ओ[illegible] ध्यान देकर अत्याचारियों के खिलाफ लोहा लेने में सम[illegible] बनना चाहिए।

आज कुछ लोगों ने हिन्दूधर्मियों की सज्जनत[illegible] सात्त्विकता, धार्मिकता, परोपकारिता व सहिष्णुता [illegible] अर्थ 'कायरता' मान लिया है। हिन्दुओं को अब सावधा[illegible] होकर भगवान श्रीकृष्ण के **क्षुद्रं हृदयदौर्बल[illegible] त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप**। 'हे परंतप ! हृदय की तुच्[illegible] दुर्बलता को त्यागकर युद्ध के लिए खड़ा हो जा।' इस वच[illegible] का स्मरण करके लोगों की उपरोक्त गलत मान्यता [illegible] तोड़कर अपनी शूरवीरता, निर्भीकता, साहसिकता [illegible] परिचय देना चाहिए। अत्याचारों और शोषणों को चुपचा[illegible] सहन करते रहना धार्मिकता नहीं कायरता है। अहिंसा [illegible] सहिष्णुता दुर्बलता का नाम नहीं है।

सहिष्णु, धार्मिक लोगों में अत्याचार का मुकाबल[illegible]

हमें ज्ञान की गाड़ी में बैठकर आत्मानंद, आत्मसुख, मुक्ति की मंजिल तक पहुँचना था लेकिन हम अज्ञान एवं बेवकूफी की गाड़ी में बैठ गये और संसार-बंधन, दुःख, परेशानी व उद्विग्नता के स्टेशन पर पहुँच गये।

कुशल मुसाफिर बनो

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

हम सब मुसाफिर हैं। इस संसाररूपी मुसाफिरखाने में थोड़े दिन के लिए सब लोग आये हैं। चतुर मुसाफिर तो वह है जो भटक न जाय और कुशलता से अपनी यात्रा तय कर ले, मंजिल को पा ले। उसीकी मुसाफिरी सार्थक है। एक मनुष्य-जन्म ही ऐसा है, जिसमें आप अपनी मुसाफिरी सार्थक कर सकते हो या निरर्थक बना सकते हो।

बुद्धु और उसके दो बेटे 'दिल्ली मेल' में मुसाफिरी कर रहे थे। बुद्धु लड़कों की पिटाई कर रहा था। आबू रोड स्टेशन (राजस्थान) से कोई महिला नेता 'दिल्ली मेल' में बैठी। उसने कहा :

''भाई ! देखो, मैं विधायक हूँ। ख्याल करना, मेरे सामने यह बदतमीजी न चलेगी। आप बच्चों को खूब पीट रहे हो। बच्चों के ऊपर हाथ न उठाओ। मेरा स्त्री-हृदय है, मुझसे देखा नहीं जाता। मैं आपको मुसीबत में डाल दूँगी।''

बुद्धु ने कहा : ''माई ! अब मुसीबत में डालने को बचा ही क्या है ? आप पहले मेरा हाल तो सुनिये ! तीन दिन पहले पत्नी से झगड़ा हो गया और वह मायके चली गयी। आज सुबह दामाद मेरी लड़की को चार बच्चों सहित मेरे घर पर पटक के गया है। वह कुछ रिश्वत लेने-देने में पकड़ा गया तो नौकरी से निष्कासित कर दिया गया है। इन दो बच्चों को लेकर इनकी माँ को मनाने जा रहा हूँ। एक बच्चे ने भोजन का डिब्बा बाहर फेंक दिया है, इसलिए उसे मारा है और दूसरे लड़के ने तो टिकटें ही चबा ली हैं और अभी-अभी मुझे पता चला कि मुझे जाना तो आदिपुर (गुजरात) था और आ गया हूँ आबू रोड से आगे। मुसाफिरी भी गलत जगह की कर रहा हूँ। बैठना तो 'कच्छ-भुज एक्सप्रेस' में था लेकिन 'दिल्ली मेल' में बैठ गया हूँ। अब आप मुझे क्या परेशान करेंगी ? मैं पूरा परेशान हूँ देवी !''

ऐसे ही हम लोग भी गलत यात्रा कर रहे हैं। हमारे मन और बुद्धि रूपी बच्चे हमारा सब खाना खराब कर चुके हैं।

हमारी बेवकूफी और दुःखालय संसार की विपरीत परिस्थितियों ने हमको पूरा परेशान कर रखा है। फिर भी हम हैं कि मन-बुद्धि की गलतियों को कोस-कोसकर और ज्यादा परेशान हो रहे हैं। अपनी बेवकूफियों का तमाशा दूसरों को दिखाकर उन्हें भी उद्विग्न बना रहे हैं। भाई ! पहले की बेवकूफी अब जानने में आयी है तो उसे सुधार लें, यही काफी है, उद्विग्न होकर नयी बेवकूफी करने की जरूरत नहीं है।

हमें ज्ञान की गाड़ी में बैठकर आत्मानंद, आत्मसुख, मुक्ति की मंजिल तक पहुँचना था लेकिन हम अज्ञान एवं बेवकूफी की गाड़ी में बैठ गये और संसार-बंधन, दुःख, परेशानी व उद्विग्नता के स्टेशन पर पहुँच गये। जब हमें अपनी इस बेवकूफी का पता चल ही गया है तो बीते हुए का शोक करके छाती पीटकर परेशानी क्यों बढ़ायें ? सत्संग और साधना से कुशल मुसाफिर क्यों न बनें ?

करने की शक्ति होनी परमावश्यक है। '**देवो दुर्बलघातकः।**' बलहीनों के लिए दैव भी घातक बन जाता है। शेर की कभी बलि नहीं दी जाती, बकरा ही बलि की भेंट चढ़ता है। अतः किसी भी प्रकार के अत्याचार-शोषण का सामना करने के लिए हमारा सबल होना जरूरी है। 'यजुर्वेद' में भी प्रार्थना की गयी है - '**बलमसि बलं मयि धेहि।**'

'हे परमात्मा ! आप बल के भण्डार हो, हमें भी बल प्रदान करो।'

पादरी रेवरेण्ड आवर का अपने मिशन के नाम पत्र

अमेरिका के पादरी 'रेवरेण्ड आवर' ने अमेरिकन मिशन को पत्र लिखा : परम शुद्धि-बुद्धि से मैंने इस धर्म के परम तत्त्व को जानने एवं पहचानने का प्रयत्न किया है। इस प्रयत्न से मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि जो सार वस्तु अन्य धर्मों में है, वह सब हिन्दू धर्म में निहित है, किंतु जो हिन्दू धर्म में है, वह अन्य धर्मों में नहीं है।

अमेरिका के पादरी 'रेवरेण्ड आवर' को भारत में ईसाई धर्म का प्रचार-प्रसार करने के लिए भेजा गया। उन्होंने पूना (महा.) के आस-पास ईसाई धर्म का प्रचार करना प्रारंभ कर दिया। एक दिन जब वे कुछ लोगों के सामने हिन्दू धर्म की निन्दा तथा ईसाई धर्म की प्रशंसा कर रहे थे, तब पं. सीतारामजी गोस्वामी ने उनसे कहा : ''आप बिना जाने-समझे हिन्दू धर्म की निन्दा क्यों करते हैं ? आपको चाहिए कि हिन्दू धर्म के संबंध में कुछ कहने से पहले उसे भलीभाँति समझ लें।''

यह बात पादरी आवर को ठीक प्रतीत हुई, अतः उन्होंने संस्कृत तथा मराठी भाषा सीखकर हिन्दू धर्मग्रंथों का गहन अध्ययन किया। इस अध्ययन से उनकी हिन्दू धर्म के प्रति गहन निष्ठा हो गयी। उन्होंने अमेरिकन मिशन को पत्र लिखा :

'भारत में सैकड़ों ईसा हैं अर्थात् ईसा जैसे अनेक संत हो गये हैं। अतः भारत में ईसाई धर्म के प्रचार का कोई औचित्य नहीं है। भारत में ईसाई धर्म-प्रचार कार्य पूर्णतः बंद कर देना चाहिए। मैंने हिन्दू धर्मग्रंथों का गहन अध्ययन कर इस तथ्य को जान लिया है कि भारतवर्ष सत्यधर्म का अगाध समुद्र है। अतः मैं मिशन से त्यागपत्र देता हूँ। आज के बाद मैं ईसाई धर्म का प्रचार-प्रसार नहीं करूँगा। इतना ही नहीं, अपनी आठ लाख रुपये की सम्पत्ति मैं 'भारतीय इतिहास शोधक मण्डल' को अर्पित करता हूँ, जिससे मण्डल द्वारा भारतीय सद्ग्रंथों के अनुवाद छपते रहें।'

उन्होंने आगे लिखा : 'बुद्धि से ही मनुष्य मनुष्य है, अन्यथा उसमें और मनुष्येतर प्राणियों में क्या अन्तर ? जो धर्म मनुष्य की बुद्धि को कैद करते हैं, उ एक निर्धारित मार्ग पर ही चलने को कहते हैं, वे उस सोचने-समझने का मौलिक अधिकार छीनते अर्थात् उसकी बौद्धिक स्वाधीनता का अपहरण कर हैं, ऐसे धर्म मनुष्य का हित नहीं, अपितु अहित कर हैं, उसे कूप-मण्डूक बनाते हैं, उसकी विकास प्रक्रिया को रोकते हैं। अतः मैं ऐसे धर्मों की निन करता हूँ। विश्व में प्रचलित सभी धर्म - ईसा इसलाम, यहूदी, पारसी और बौद्ध आदि मनुष्य बुद्धि को कैद करते हैं। केवल हिन्दू धर्म ही एक ऐस धर्म है, जो मनुष्य को बौद्धिक स्वतंत्रता प्रदान कर है, अतः मैं हिन्दू धर्म का हिमायती हूँ।

ईसाई, इसलाम, यहूदी और बौद्ध आदि ध 'प्रचारक धर्म' हैं। प्रचार का अर्थ - कुछ विशे विश्वासों एवं मतों को जनसमूह में प्रचलित करना जितने प्रचारक धर्म हैं, वे कुछ विश्वासों तथा मतों प आधारित हैं। वे विश्वास एवं मत सार्वजनिक नहीं अर्थात् सभी उनको सत्य नहीं मानते। जो उन बा को सत्य नहीं मानते, वे उन धर्मों से बाहर रहते हैं। उ धर्मों की व्यापकता मतैक्य पर निर्भर है किंतु हिन्दू ध में यह बात नहीं है। उसका प्राण मत नहीं आचार है विश्वास नहीं अनुष्ठान है।

हिन्दू धर्म में श्रद्धा के सुमन विवेक के प्रकाश में ह खिलते हैं। इस धर्म में विचारों की पूर्ण स्वतंत्रता है हिन्दू धर्म में कोई वैष्णव है, कोई शैव है तथा को शाक्त है, कोई आस्तिक है तो कोई नास्तिक तत्त्वालोचना में हिन्दू दर्शनशास्त्रों में तीव्र मतभेद है निरीश्वर सांख्य और सेश्वर योग तथा न्याय, वैशेषि

अथवा पूर्व मीमांसा एवं उत्तर मीमांसा सभी अपने-अपने सिद्धान्तों का मण्डन और दूसरों के सिद्धान्तों की समालोचना करते हैं तो भी वे सभी हिन्दू धर्म में सम्मिलित हैं, कोई भी हिन्दू समाज से बहिष्कृत नहीं हुआ है। विचार की यह स्वाधीनता, साधना के ऋजु-वक्र अनेक पथ हिन्दू धर्म में ही हैं। इन्हींके कारण हिन्दू धर्म में वह उदार तथा सार्वजनीन भाव आ गया है, जो अन्यत्र नहीं है। हिन्दू धर्म जैसी उदारता प्रचारक धर्मों में संभव नहीं है। कोई भी प्रचारक धर्म यह स्वीकार नहीं करेगा कि दूसरे धर्मों में भी सत्य है। सभी अपने को सही तथा दूसरों को गलत बतलाते हैं। इसलाम कहता है : 'जो मुसलमान नहीं हैं, उन्हें जहन्नुम जाना पड़ेगा।' ईसाई धर्म के कथनानुसार 'जो ईसाई नहीं हैं, उन्हें नरक की यातना सहनी पड़ेगी।' इस प्रकार सभी प्रचारक धर्म विश्वकल्याणार्थ अपने संकीर्ण मत का प्रचार कर विश्व का अकल्याण कर रहे हैं। हिन्दू धर्म अपने को पूर्ण सत्यज्ञाता नहीं मानता। वह कहता है : **'इदमित्थं कहि जाइ न सोई ॥'** (श्रीरामचरित., बा.कां. : १२०.२) अर्थात् यही सत्य है, ऐसा नहीं कहा जा सकता।

सभी प्रचारक धर्म अंधश्रद्धा के बल पर स्थित हैं, किंतु हिन्दू धर्म में यह बात नहीं है। भारतीय ऋषियों का यह अनादि धर्म, जिसमें जगत के समस्त धर्मों का सहज में समन्वय हो सकता है, अन्य धर्मों की भाँति खोखला या निराधार नहीं है। परम शुद्धि-बुद्धि से मैंने इस धर्म के परम तत्त्व को जानने एवं पहचानने का प्रयत्न किया है। इस प्रयत्न से मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि हिन्दू धर्म, धर्म का एक अगाध महासागर है। जो सार वस्तु अन्य धर्मों में है, वह सब हिन्दू धर्म में निहित है, किंतु जो हिन्दू धर्म में है, वह अन्य धर्मों में नहीं है।

उक्त विचारों के कारण मैं मिशन से त्यागपत्र दे रहा हूँ। मुझे बौद्धिक स्वतंत्रता के वातावरण में विचरने दीजिये।'

पादरी मि. एलविन की अंतरात्मा कराह उठी

अंग्रेजी शासनकाल में ईसाई मिशनरियों ने वनवासी जातियों के साथ बहुत ही क्रूर व्यवहार कर उन्हें बलात् ईसाई बनने पर विवश किया। संयोगवश इसका पर्दाफाश एक प्रतिष्ठित ईसाई मिशनरी एलविन द्वारा ही किया गया। मि. एलविन इंग्लैंड की ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी के डी.एस.सी. तथा प्राणीशास्त्र के विशेषज्ञ थे। वे भारत में पादरी बनकर ही आये थे किंतु बाद में उन्हें यह कार्य अपनी अंतरात्मा के विरुद्ध लगा और उन्होंने इस कार्य को छोड़ दिया। काश ! और समझदार लोगों की आत्मा भी ऐसी जागृत हो। भारतीय संस्कृति की मूल धारा से जुड़े लोगों को उस धारा से तोड़कर अपने बदइरादे साकार करने के बदले मि. एलविन जैसा नेक इरादा बनायें तो कितना अच्छा ! दूसरों को धर्मांतरित करने में पादरी मि. एलविन की अंतरात्मा कराह उठी और वे धर्मांतरण की घिनौनी प्रवृत्ति छोड़कर अंतरात्मा की शांति के रास्ते चले। भारत को अखंड ही रहने दें। धर्मांतरण का कुचक्र चलानेवाले लोग अपनी बदमुरादें छोड़कर अपने ही सजातीय पादरी मि. एलविन का अनुसरण करें तो कितना अच्छा !

जिस क्षण हम संसार के सुधारक बनकर खड़े होते हैं उसी क्षण हम संसार को बिगाड़नेवाले बन जाते हैं। शुद्ध परमात्मा को देखने के बजाय जगत को बिगड़ा हुआ देखने की दृष्टि बनती है। सुधारक लोग मानते हैं कि : 'भगवान ने जो जगत बनाया है वह बिगड़ा हुआ है और हम उसे सुधार रहे हैं।' वाह ! वाह ! धन्यवाद सुधारको ! अपने दिल को सुधारो पहले। सर्वत्र निरंजन का दीदार करो। तब आपकी उपस्थितिमात्र से, आपकी दृष्टिमात्र से, अरे प्यारे ! आपको छूकर बहती हवामात्र से अनन्त जीवों को शांति मिलेगी और अनन्त सुधार होगा। नानक, कबीर, महावीर, बुद्ध और लीलाशाह बापू जैसे महापुरुषों ने यही कुंजी आजमायी थी।

(आश्रम की पुस्तक 'जीवन रसायन' से)

स्वाभाविक जीवन-सुहावना जीवन

(बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

जब अपमान होता है तो वह किसकी सत्ता से होता है ? चैतन्य परमात्मा की सत्ता से और जब आदर-सत्कार तथा मान-सम्मान होता है तो वह किसकी सत्ता से होता है ? उसीकी सत्ता से। तो यह एक लीला है। लीला में सहयोग दो, इसमें मुँह चढ़ाने की क्या जरूरत है ?

न करे नारायण, किसीके घर मृत्यु हो जाय... नारायण न करे तो भी ऐसा होता रहता है। नारायण के यहाँ भी मृत्यु होती है तो दूसरों की तो बात ही क्या ? भगवान श्रीराम के घर से भी दशरथजी गये, और भी गये - सब गये। किसीके यहाँ कोई चल बसा हो और वह आदमी रोये, आपके जीवन में भी कभी-न-कभी कुछ ऐसा घटा होगा, जब रोने का मौका आया होगा तो १५ मिनट आप या कोई रोये, किसी-न-किसीकी मृत्यु में, किसी स्नेही की याद में-वियोग में और कोई पूछे : ''क्यों, बहुत मजा आया न ?'' तो आप क्या बोलोगे ? आप नाराज हो जाओगे कि 'इस आदमी का दिमाग खिसक तो नहीं गया है ?' कितना भी स्नेही हो, आप नाराज हो जायेंगे कि ''हम रो रहे हैं और तू बोलता है मजा आया ?''

और १५ मिनट आप ध्यान में, भाव में आ जाते हो तथा आपके पुराने संस्कारों की परतें खुलती हैं, कुंडलिनी जागृत हो जाती है, तब अथवा बिल्वमंगल की या ऐसी कोई बात मैं कह देता हूँ और उसके साथ मैं भी तादात्म्य कर लेता हूँ तो मेरी चेतना, मेरे संकल्प, भ और आपके भाव एक साथ बहने लगते हैं तथा आप २ २५ मिनट रो लेते हो कथा में, ध्यान में। कथा, ध्यान प हो जाय तब बाहर आने पर कोई पूछे : ''कैसा रहा ?'' आप बोलते हो : ''अरे ! आज तो बहुत मजा आया। अ जैसी कथा तो किसी दिन नहीं हुई। अ जैसा ध्यान तो कभी मेरा लगा ही नहीं।''

स्वाभाविक रोना भी आपको हलके हलका फूल जैसा बनाता है और ममता से या अहंकार से हँसना भी आपको बोझिल बना देता है, जवाबदारियों में ला देता है, भय में ला देता है।

''किंतु आप तो रो रहे थे !''

''अरे, रो तो रहे थे पर इस रोने में कुछ और रस था।''

किसीकी मृत्यु हुई थी तब ममता मे रहे थे और अब स्वाभाविक रो रहे थ स्वाभाविक रोना भी आपको हलका, फू जैसा बनाता है और ममता से या अहंक से हँसना भी आपको बोझिल बना देता जवाबदारियों में ला देता है, भय में देता है।

जीवन सरल, स्वाभाविक, निर होगा तो भगवत्प्राप्ति सहज है और जी जितना अड़ा-कड़ा-जटिल होगा उतना भगवान हम दूर होंगे। इसलिए गोरखनाथजी की बात मैं बार-ब दोहराता हूँ :

हँसिबो खेलिबो धरिबो ध्यान,
अहर्निश कथिबो ब्रह्मज्ञा
खावे पीवे न करे मन भंगा,
कहे नाथ मैं तिसके संग

मंत्र मंजूषा

(चैत्री नवरात्रि : ३० मार्च से ७ अप्रैल)

नवरात्रि में स्नानादि से निवृत हो तिलक लगाके एवं दीपक जलाकर यदि कोई बीजमंत्र 'हूं' अथवा 'अं रां अं' मंत्र की इक्कीस माला जप करे एवं 'श्रीगुरुगीता' का पाठ करे तो शत्रु भी उसके मित्र बन जायेंगे।

नौ योगीश्वरों की कथा

(गतांक से आगे)

इस प्रकार किसी भी व्यक्ति, वस्तु और स्थान में आसक्ति न करके विचरण करते रहना चाहिए। जो इस प्रकार विशुद्ध व्रत-नियम ले लेता है, उसके हृदय में अपने परम प्रियतम प्रभु के नाम-कीर्तन से अनुराग का, प्रेम का अंकुर उग आता है। उसका चित्त द्रवित हो जाता है। अब वह साधारण लोगों की स्थिति से ऊपर उठ जाता है, लोगों की मान्यताओं, धारणाओं से परे हो जाता है। दंभ से नहीं, स्वभाव से ही मतवाला-सा होकर कभी खिलखिलाकर हँसने लगता है तो कभी फूट-फूटकर रोने लगता है। कभी ऊँचे स्वर से भगवान को पुकारने लगता है तो कभी मधुर स्वर से उनके गुणों का गान करने लगता है। कभी-कभी जब वह अपने प्रियतम को अपने नेत्रों के सामने अनुभव करता है, तब उन्हें रिझाने के लिए नृत्य भी करने लगता है।

राजन् ! यह आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, ग्रह-नक्षत्र, प्राणी, दिशाएँ, वृक्ष-वनस्पति, नदी, समुद्र-सब-के-सब भगवान के शरीर हैं। सभी रूपों में स्वयं भगवान प्रकट हैं। ऐसा समझकर वह, जो कोई भी उसके सामने आ जाता है, चाहे वह प्राणी हो या अप्राणी उसे अनन्यभाव से, भगवद्भाव से प्रणाम करता है। जैसे भोजन करनेवाले को प्रत्येक ग्रास के साथ ही तुष्टि (तृप्ति अथवा सुख), पुष्टि (जीवनशक्ति का संचार) और क्षुधा-निवृत्ति - ये तीनों एक साथ होते जाते हैं, वैसे ही जो मनुष्य भगवान की शरण लेकर उनका भजन करने लगता है, उसे भजन के प्रत्येक क्षण में भगवान के प्रति प्रेम, अपने प्रेमास्पद प्रभु के स्वरूप का अनुभव और उनके अतिरिक्त अन्य वस्तुओं में वैराग्य - इन तीनों की एक साथ ही प्राप्ति होती जाती है। राजन् ! इस प्रकार जो प्रतिक्षण एक-एक वृत्ति के द्वारा भगवान के चरणकमलों का ही भजन करता है, उसे भगवान के प्रति प्रेममयी भक्ति, संसार के प्रति वैराग्य और अपने प्रियतम भगवान के स्वरूप की स्फूर्ति - ये सब अवश्य ही प्राप्त होते हैं, वह भागवत हो जाता है तथा जब ये सब प्राप्त हो जाते हैं, तब वह स्वयं परम शांति का अनुभव करने लगता है।

राजा निमि ने पूछा : योगीश्वर ! अब आप कृपा करके भगवद्भक्त के लक्षणों का वर्णन कीजिये। उसके क्या धर्म हैं ? और कैसा स्वभाव होता है ? वह मनुष्यों के साथ व्यवहार करते समय कैसा आचरण करता है ? क्या बोलता है ? और किन लक्षणों के कारण भगवान का प्यारा होता है ?

अब नौ योगीश्वरों में से दूसरे हरिजी बोले : राजन् ! आत्मस्वरूप भगवान समस्त प्राणियों में आत्मारूप से, नियंतारूप से स्थित हैं। जो कहीं भी न्यूनाधिकता न देखकर सर्वत्र परिपूर्ण भगवत्सत्ता को ही देखता है और साथ ही समस्त प्राणी एवं समस्त पदार्थ आत्मस्वरूप भगवान में ही आधेयरूप से अथवा अध्यस्तरूप से स्थित हैं अर्थात् वास्तव में भगवत्स्वरूप ही हैं - इस प्रकार का जिसका अनुभव है, ऐसी जिसकी सिद्ध दृष्टि है, उसे भगवान का परम प्रेमी उत्तम भागवत समझना चाहिए। जो भगवान से प्रेम, उनके भक्तों से मित्रता, दुःखी और अज्ञानियों पर कृपा तथा भगवान से द्वेष करनेवालों की उपेक्षा करता है, वह मध्यम कोटि का भागवत है। जो भगवान के अर्चा-विग्रह-मूर्ति आदि की पूजा तो श्रद्धा से करता है, परंतु भगवान के भक्तों या दूसरे लोगों की विशेष सेवा-शुश्रूषा नहीं करता, वह साधारण श्रेणी का भगवद्भक्त है।

जो श्रोत्र-नेत्र आदि इन्द्रियों के द्वारा शब्द-रूप आदि विषयों का ग्रहण तो करता है, परंतु अपनी इच्छा के प्रतिकूल विषयों से द्वेष नहीं करता और अनुकूल विषयों के मिलने पर हर्षित नहीं होता। जिसकी यह दृष्टि बनी रहती है कि यह सब हमारे भगवान की माया है, वह पुरुष उत्तम भागवत है। संसार के धर्म हैं - जन्म-मृत्यु, भूख-प्यास, श्रम-कष्ट, भय और तृष्णा। शरीर का जन्म-मृत्यु होता है, प्राणों को भूख-प्यास लगती है, इन्द्रियों को श्रम-कष्ट होता है, मन को भय होता है और तृष्णा बुद्धि को प्राप्त होती ही रहती है। जो पुरुष भगवान की स्मृति में इतना तन्मय रहता है कि इनके बार-बार होते रहने पर भी इनसे मोहित नहीं होता, पराभूत नहीं होता, वह उत्तम भागवत है। ऐसों के ही माता-पिता और कुल-गोत्र धन्य हैं !

धन्या माता पिता धन्यो गोत्रं धन्यं कुलोद्भवः।
धन्या च वसुधा देवि यत्र स्याद् गुरुभक्तता ॥

(क्रमशः)

'वैलेन्टाईन डे' बनाम 'पाप डे'

सूरत आश्रम (गुज.) में होली के अवसर पर परम पूज्य बापूजी ने लाखों की संख्या में उमड़ी जनमेदनी को संबोधित कर विश्वमानव को 'युवाधन विनाश डे' व उसके भयंकर परिणामों से अवगत कराते हुए कहा कि रोम के राजा क्लाउडियस ब्रह्मचर्य की महिमा से परिचित रहे होंगे, इसलिए उन्होंने अपने सैनिकों को शादी करने के लिए मना किया था, ताकि वे शारीरिक बल और मानसिक दक्षता से युद्ध में विजय प्राप्त कर सकें। जबरदस्ती सैनिकों को शादी करने की मना की गयी थी, इसलिए संत वेलेन्टाइन, जो स्वयं ईसाई पादरी होने के कारण ब्रह्मचर्य के विरोधी नहीं हो सकते थे, ने गुप्त ढंग से उनकी शादियाँ करायीं। राजा ने उनको दोषी घोषित किया और उन्हें फाँसी दे दी गयी। सन् ४९६ से पोप गेलेसियस ने उनकी याद में 'वेलेन्टाइन डे' मनाना शुरू किया।

'वेलेन्टाइन डे' मनानेवाले लोग संत वेलेन्टाइन का ही अपमान करते हैं क्योंकि वे शादी के पहले ही अपने प्रेमास्पद को वेलेन्टाइन कार्ड भेजकर उनसे प्रणय-संबंध करने का प्रयास करते हैं। यदि वेलेन्टाइन इससे सहमत होते तो वे शादियाँ कराते ही नहीं।

यौनजीवन संबंधी परंपरागत नैतिक मूल्यों का त्याग करनेवाले देशों की चारित्रिक सम्पदा नष्ट होने का मुख्य कारण ऐसे 'वेलेन्टाइन डे' हैं, जो लोगों को अनैतिक जीवन जीने को प्रोत्साहित करते हैं। इससे उन देशों का अधःपतन हुआ है। अमेरिका में ७% बच्चे १३ वर्ष की उम्र के पहले ही यौन संबंध कर लेते हैं। ८५% लड़के और ७७% लड़कियाँ १९ वर्ष के पहले ही यौन संबंध कर लेते हैं। इससे जो समस्याएँ पैदा हुईं, उनको मिटाने के लिए वहाँ की सरकारों को करोड़ों डॉलर खर्च कर[illegible] पर भी सफलता नहीं मिलती। अतः भारत जैसे देशों क[illegible] अपने परंपरागत नैतिक मूल्यों की रक्षा करने के लिए ऐसे 'वेलेन्टाइन डे' का बहिष्कार करना चाहिए और नैतिक मूल्यों का सिंचन करनेवाली संस्थाओं को सरकार के द्वारा प्रोत्साहन मिलना चाहिए ताकि ऐसी समस्याएँ इस देश में उत्पन्न ही न हों।

हमारे भारत की महान संस्कृति का अनुकरण करेंगे तो सुखी होंगे। उनका कचरा कल्चर लेने से एड् की बीमारी बढ़ेगी, बच्चे-बच्चियाँ अशांत रहें विकलांगों की, विक्षिप्तों की संख्या बढ़ेगी।

इसके बदले 'प्रीति दिवस' मनाओ, माता-पिता क पूजन करो। बेटे-बेटियाँ माता-पिता में ईश्वरीय अं देखें और माता-पिता बच्चों में ईश्वरीय अंश देखें।

युवक-युवतियाँ 'वेलेन्टाइन डे' मनायेंगे, कामु दृष्टि से एक-दूसरे की तरफ देखेंगे, काम और सेक्सुअ भावना से दिन में भी रज-वीर्य का नाश करेंगे। इस उनकी बुद्धि कमजोर होगी, आँखें कमजोर होंगी आनेवाली संतान कमजोर होगी। इसे तो देश की कम तोड़ने का 'पाप दिन' कह सकते हो। यह प्रेम दिन नह युवक-युवतियों के साथ घोर जुल्म का दिन है, 'युवाध विनाश डे' है। उन अनजानों को नहीं पता है लेकि डॉक्टर, वैद्य और बुद्धिमान समझ सकते हैं कि युवक युवतियाँ एक-दूसरे को फूल देंगे, एक-दूसरे के शरीर क स्पर्श करेंगे तो सेक्सुअल केन्द्र की ऊर्जा नष्ट होगी ऊर्ध्वगमन करेगी?

माता-पिता का पूजन करते हैं तो काम राम बदलेगा, अहंकार प्रेम में बदलेगा, माता-पिता आशीर्वाद से बच्चों का मंगल होगा।

आजकल पत्रिकाओं के द्वारा अविवाहितों को यौनशिक्षा के नाम पर चरित्रहीनता की शिक्षा दी जाती है सरकार स्कूलों में भी यौनशिक्षा देना चाहती है। उ पाश्चात्य देशों के अनुभवों से स्वयं शिक्षा लेनी चाहिए पाश्चात्य देशों में किशोरों को स्कूलों में 'सलामत यौ संबंध' और विस्तृत यौनशिक्षा दी जाती थी। अब उनक समझ में आया कि ये यौन पाठ्यक्रम यौन प्रवृत्ति को दे से (जितना हो सके उतनी बड़ी उम्र के बाद) करने क सशक्त संदेश देने में विफल हुए हैं और यौनजीवन दीर्घजीवी भावनात्मक व नैतिक पहलुओं को पर्याप्त ढ से समझाने में सक्षम नहीं हैं तथा विद्यार्थियों को, जब युवावस्था में प्रवेश करेंगे, तब उनको दीर्घजीवी प्रेमपू विवाहित जीवन की कुंजियाँ देने में सफल नहीं हो

(जिसके कारण तलाक आदि होते हैं) । इसलिए पाश्चात्य देशों में अब पिछले पाँच वर्षों से संयम की शिक्षा दी जाती है, जिसमें यौनजीवन में प्रवेश करने में विलम्ब करने का महत्त्व बताया जाता है। मानवीय यौन संबंध शारीरिक की अपेक्षा भावनात्मक व नैतिक अधिक होता है और संयम की शिक्षा के कारण उनका विवाहित जीवन प्रेमपूर्ण तथा चिरस्थायी बना रहेगा, ऐसा बताया जाता है।

इन सब शिक्षाओं से कहीं ज्यादा उपयोगी बातें आश्रम से प्रकाशित **'यौवन सुरक्षा'** पुस्तक में बतायी गयी हैं, जो विद्यार्थियों को विधेयात्मक ढंग से संयम न करने से होनेवाली हानियों के साथ संयम से होनेवाले शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक और सामाजिक लाभ की प्राप्ति के लिए संयमी जीवन जीने को प्रोत्साहित करती हैं।

सरकार को चाहिए कि उसे राष्ट्र को भयानक समस्याओं से बचाने के लिए यौनशिक्षा के अंतर्गत सिर्फ यौवन-सुरक्षा की शिक्षा देनी चाहिए। सरकार यह न कर सके तो सभी राष्ट्रभक्त नागरिकों को यह राष्ट्रहित का कार्य करके भावी सुदृढ़ राष्ट्र-निर्माण में अपना योगदान देना चाहिए।

विकसित देशों के किशोर-किशोरियों के बुरे हाल

इन्नोसन्टी रिपोर्ट कार्ड के अनुसार २८ विकसित देशों में हर साल १३ से १९ वर्ष की १२ लाख ५० हजार किशोरियाँ गर्भवती हो जाती हैं। उनमें से ५ लाख गर्भपात कराती हैं और ७ लाख ५० हजार कुँवारी माता बन जाती हैं। अमेरिका में हर साल ४ लाख ९४ हजार अनाथ बच्चे जन्म लेते हैं और ३० लाख किशोर-किशोरियाँ यौन रोगों के शिकार होते हैं।

यौन संबंध करनेवालों में २५ प्रतिशत किशोर-किशोरियाँ यौन रोगों से पीड़ित हैं। अतः असुरक्षित यौन संबंध करनेवालों में ५० प्रतिशत को गोनोरिया, ३३ प्रतिशत को जैनिटल हर्पिस और एक प्रतिशत को एड्स का रोग होने की संभावना है। एड्स के नये रोगियों में २५ प्रतिशत २२ वर्ष से छोटी उम्र के होते हैं। अमेरिका के ३३ प्रतिशत स्कूलों में यौन शिक्षा के अंतर्गत केवल संयम की शिक्षा दी जाती है। इसके लिए अमेरिका ने ४० करोड़ से अधिक डॉलर खर्च किये हैं।

'द हेरिटेज सेन्टर फॉर डेटा एनेलिसिस' की एक रिपोर्ट के अनुसार - सतत डिप्रेशन से ग्रस्त रहनेवाली लड़कियों में साधारण लड़कियों की अपेक्षा यौन संबंध करनेवाली लड़कियों की संख्या तीन गुनी से अधिक है और आत्महत्या का प्रयास करनेवाली लड़कियों में साधारण लड़कियों की अपेक्षा यौन संबंध करनेवाली लड़कियों की संख्या तीन गुनी है। सतत डिप्रेशन में रहनेवाले लड़कों में साधारण लड़कों की अपेक्षा यौन संबंध करनेवाले लड़कों की संख्या दुगनी से अधिक होती है और आत्महत्या का प्रयास करनेवाले [illegible] में साधारण लड़कों की अपेक्षा यौन संबंध करनेवाले लड़कों की संख्या आठ गुना अधिक है।

यौन संबंध करनेवालों में से ६ प्रतिशत लड़के और २४ प्रतिशत लड़कियाँ आत्महत्या करने का प्रयास करती हैं। डॉ. मेग मीकर लिखते हैं : ''किशोर वय में यौन प्रवृत्ति स्वाभाविक ही भावनात्मक उपद्रव और मानसिक क्लेश पैदा करती है। ऐसे अनैतिक यौन संबंध की अनुमति से खोखले संबंध, आत्मग्लानि और तुच्छता की भावना उत्पन्न होती है, जो डिप्रेशन के मुख्य कारण हैं।''

प्यारे भारतवासियो ! अब आप ही सोचो, क्या उनकी गंदगी हमें अपने देश में लानी है ? क्या भारतवासी कन्याओं के माता-पिता ये चाहेंगे कि उनकी कन्या विदेशी पाश्चात्य अंधानुकरण में फँसकर 'वेलेन्टाइन डे' के दुष्चक्र में उक्त विदेशी कन्याओं की नाईं कुवासना का शिकार बने, गर्भपात कराये ?

- पूज्य बापूजी

आपको जो कुछ शरीर से, बुद्धि से या आत्मा से कमजोर बनाये उसको विष की तरह तत्काल त्याग दो । वह कभी सत्य नहीं हो सकता । सत्य तो बलप्रद होता है, पावन होता है, ज्ञानस्वरूप होता है । सत्य वह है जो शक्ति दे।

- आश्रम की पुस्तक 'जीवन रसायन' से

...श्रेष्ठ भावों का सिंचन हो रहा है

घर में हम सब बापूजी से दीक्षित हैं। हम बल्ब कंपनी चलाते हैं। कंपनी में लगे गुरुदेव के चित्र के दर्शन व पूजा करके काम चालू करते हैं। 'श्री आसारामायण' की कैसेट लगाते हैं व सब लोग पाठ सुनते हुए अपना काम करते हैं।

'श्री आसारामायण' सुननेमात्र से कंपनी के कर्मचारियों में पूज्य बापूजी के दर्शन व दीक्षा की ललक जगी। हमने आयोजन करके सांताक्रुज (मुंबई) में पूज्यश्री से कर्मचारियों को दीक्षा दिला दी।

अब गुरुदेव की कृपा से कंपनी में अधिकांश कर्मचारी दीक्षित हो गये हैं तथा 'श्री आसारामायण' व भजन की कैसेटें सुनकर अपार आनंद का अनुभव करते हुए काम करते हैं। पहले जहाँ सब रेडियो, टी.वी. के हलके भावों में गिरते थे, वहाँ अब श्रेष्ठ भावों का सिंचन हो रहा है। गुरुदेव की कृपा से हमारी कंपनी भी खूब अच्छी चलने लगी है।

– राकेश श्रीवास्तव, पूना।

उजड़ा घर-संसार बसा

मेरे पतिदेव मुझे अपनाने के लिए तैयार न थे, परंतु दिनांक १२-१३ मार्च ०५ को थराद सत्संग में बापूजी ने मुझे पार्वती माँ का मंत्र जपने को कहा और शिवमंदिर में जाकर माता पार्वती के चरणों में तिलक कर त्राटक करके एक माला करने को कहा था, परंतु गुरुजी की दया से शिवमंदिर जाने से पहले ही दिनांक १५-१६ मार्च को ससुरालवाले लेने आ गये। मैं १ महीना ससुराल में रुकी, अपने पति से मिली। उन्होंने मंत्रदीक्षा भी ले ली। इस तरह उजड़ा घर-संसार कोर्ट-कचहरी के बिना सीधा-सादा चल रहा है।

धन्य हैं बापूजी और मंत्र !

– लताबहन सुरेशकुमार जयसवाल
पानसर, तह. कलोल, जि. गाँधीनगर (गुज.)।

नया रिकॉर्ड बनाया

मैंने जुलाई २००१ में मुंबई में सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा ली थी। उसी दिन से मेरा नया जन्म हुआ है। पूज्य बापू से दीक्षा लेने के बाद मुझे बहुत अनुभव हुए हैं। मैं इंजीनियरिंग के अंतिम वर्ष में औरंगाबाद (महा.) में पढ़ रहा हूँ। मैंने इंजीनियरिंग के दूसरे वर्ष में गणित (इंजीनियरिंग गणित-८) में पूरे अंक (१००/१००) लेकर सम्पूर्ण विश्वविद्यालय (औरंगाबाद विश्व-विद्यालय) में एक रिकॉर्ड बनाया है। यह सब बापूजी के सारस्वत्य मंत्र का प्रभाव है।

बापूजी के चरणों में मेरे कोटि-कोटि प्रणाम !

– प्रशांत सुनील बागुल
औरंगाबाद, महाराष्ट्र

बड़ बादशाह की कृपा से मोतियाबिंद ठीक

परम पूज्य बापूजी !

सादर प्रणाम

पिछले साल मेरी पुत्री इन्द्र कुमारी (२२ वर्षीया) की आँखों की रोशनी अचानक चली गयी। हमने कई डॉक्टरों को दिखाया लेकिन डॉक्टरों ने इसे लाइलाज घोषित कर दिया।

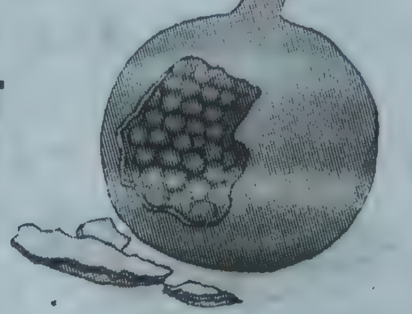
मैंने घर पर मन-ही-मन संकल्प किया कि 'बापूजी ! मैं अमदावाद में बड़ बादशाह की ११० परिक्रमा करूँगा। मेरी बिटिया की आँखें ठीक कर दो।'

संकल्प लेने के कुछ दिन बाद ही मेरी बिटिया की दोनों आँखें ठीक हो गयीं।

– रामकेवल यादव
अमदावाद
फोन नं. : ५५२३९२१५

संसार की तमाम वस्तुएँ सुखद हों या भयानक, वास्तव में तो तुम्हारी प्रफुल्लता और आनन्द के लिए ही प्रकृति ने बनायी हैं। उनसे डरने से क्या लाभ ? तुम्हारी नादानी ही तुम्हें चक्कर में डालती है। अन्यथा, तुम्हें नीचा दिखलानेवाला कोई नहीं। पक्का निश्चय रखो कि यह जगत तुम्हारे किसी शत्रु ने नहीं बनाया है। तुम्हारे ही आत्मदेव का यह सब विलास है।

त्रिदोषशामक अनार



'अष्टांगसंग्रह' में अनार के गुणों का वर्णन किया गया है :

हृद्यं लघु स्निग्धं ग्राहि रोचनदीपनम्।
उद्रिक्तपित्तान् जयति त्रिदोषान् स्वादु दाडिमम्॥
(अन्नस्वरूप विज्ञानीय अध्याय : १६८,१६९)

मीठा अनार हृदय के लिए हितकारी, पचने में हलका, स्निग्ध, ग्राही अर्थात् मल को बाँधनेवाला, रुचिकर, अग्निप्रदीपक, त्रिदोषशामक विशेषतः प्रकुपित पित्त को शीघ्र शांत करनेवाला है।

यह पचने में अत्यंत हलका है। इसीसे लगभग सभी व्याधियों में यह पथ्यकर है। इसके सेवन से आमाशय में भोजन पचानेवाले रसों का निर्माण होता है। अतः पाचन-संबंधी विकारों जैसे अग्निमांद्य, अरुचि, अजीर्ण, अफरा, संग्रहणी, अतिसार में यह खूब लाभदायी है। पित्तशामक होने के कारण अम्लपित्त, रक्तपित्त, रक्तातिसार, पित्तज ज्वर, पीलिया, पाण्डु में लाभदायी है। इससे हृदय की जलन व बेचैनी शांत हो जाती है। यह सेवन करने के बाद शीघ्र ही बल, उत्साह, तृप्ति व शीतलता प्रदान करता है। मस्तिष्कगत पित्त को शांत कर स्मरणशक्ति व प्रसन्नता बढ़ाता है।

अनार को सुखाकर बनाया गया अनारदाना रुचिकारक होता है। अनार की जड़ कृमिनाशक है। अनार का रस पीने की अपेक्षा दाने चबाकर खाना विशेष लाभदायी है।

दाड़िमावलेह :

१ किलो चीनी की चाशनी बनाकर उसमें ६०० मि.ली. अनार का रस और जायफल, जावित्री, काली मिर्च, तेजपत्र, दालचीनी, लौंग, सोंठ, पीपल प्रत्येक ३-३ ग्राम मिलाकर मंद अग्नि पर पकायें। मिश्रण गाढ़ा होने पर उतार लें। यह स्वादिष्ट अवलेह दाह, अरुचि, अतिसार, शिरोरोग, लू लगना, शारीरिक कमजोरी में शीघ्र लाभदायी है। यह मस्तिष्क एवं हृदय को बल देता है।

सेवन विधि : ५ से १० ग्राम दूध के साथ सुबह-शाम।

घुटनों के वातरोग से बचने हेतु

'वेस्टर्न रिजर्व यूनिवर्सिटी, अमेरिका' में किये गये एक प्रयोगानुसार प्रतिदिन मीठे अनार का रस पीने से घुटनों की हड्डियों पर स्थित कार्टीलेज (कोमल हड्डियाँ) जल्दी नहीं घिसते। जो लोग ४० वर्ष से अधिक उम्रवाले हैं और व्यायाम या किसी भी प्रकार की शारीरिक प्रवृत्ति नहीं करते, ऐसे स्त्री-पुरुषों के शरीर से एक प्रकार का एन्जाइम निकलता है, जिसके प्रभाव से कार्टीलेज घिस जाते हैं एवं टूट जाते हैं।

यदि नियमित रूप से मीठे अनार के रस का सेवन किया जाय तो उसमें स्थित 'फ्लेवेनोइड' नामक तत्त्व से शरीर में उपरोक्त एन्जाइम का उत्पादन कम हो जाता है और कार्टीलेज की घिसाई कम होती है। जिससे वे जल्दी खराब नहीं होते तथा घुटनों का वातरोग (ऑस्टियो आर्थराइटिस) नहीं होता।

गुणकारी हर्रे (हरड़)

चबाकर खायी हुई हरड़ जठराग्नि को प्रदीप्त करती है, पाचनशक्ति बढ़ाती है।

चूर्ण फाँकने से मल साफ लाती है। सेंककर खाने से त्रिदोषों को नष्ट करती है। खाना खाते समय खात्ते से यह शक्तिवर्धक और पुष्टिकारक है।

ग्रीष्मकाल में (२० अप्रैल से २० जून २००६ तक) इसका सेवन गुड़ के साथ करना चाहिए। वायु की अधिकता में इसे घी में भूनकर अथवा मिलाकर लें। कफ की अधिकता में सैंधव मिलाकर तथा पित्त की अधिकता में मिश्री मिलाकर लें।

हरड़ का प्रयोग करने से पेट के कीड़े भी समाप्त हो जाते हैं। छोटी हरड़ को पीसकर उसका लेप फुन्सियों पर करने से फुन्सियाँ ठीक हो जाती हैं।

वृद्ध, अति श्रम करनेवाले दुर्बल व्यक्ति को तथा गर्भिणी स्त्री को हरड़ का प्रयोग नहीं करना चाहिए।



अश्वत्थासन

विधि : दोनों पैरों पर खड़े होकर प्रथम दायें पैर को यथासाध्य पीछे ले जायें और दायें हाथ को दायें कंधे की तरफ फैलाते हुए बायें हाथ को सिर के पास सीधा ऊपर फैला दें। फिर चित्र में दिखाये अनुसार सीने को बाहर की तरफ तानते हुए खड़े हों। पैर बदलकर पुनः यही विधि दोहरायें।

लाभ : इसके अभ्यास से शरीर के भीतर जो प्राण, अपान आदि दस प्रकार की वायु विद्यमान हैं, उनका भलीभाँति संचार होने लगता है। संसारभर में जितने भी वृक्ष हैं, सभी दिन में ऑक्सीजन देते हैं तथा रात्रि को कार्बन डाईऑक्साइड देते हैं लेकिन पीपल के वृक्ष में यह विशेषता है कि यह रात को भी ऑक्सीजन देता है। इस आसन के अभ्यास से ऑक्सीजन ज्यादा मात्रा में शरीर के अंदर जाती है और अधिक मात्रा में नाईट्रोजन बाहर निकलती है। इसलिए इस आसन का अभ्यास करनेवाले शीघ्र ही स्वस्थ एवं सुन्दर हो जाते हैं।

इस आसन का अभ्यास सगर्भा स्त्री भी कर सकती है। जब शिशु माता के गर्भ में होता है उस समय माता को श्वास लेने में किसी-किसी समय कठिनाई भी महसूस होने लगती है। यह बात अश्वत्थासन करनेवाली स्त्रियों को नहीं हो सकती। इस आसन के अभ्यास से उनके शरीर में रक्तसंचार भलीभाँति होने लगता है। उन्हें अधिक प्रसव-पीड़ा का भी भय नहीं रहता।

इसके अभ्यास से सिर से पैर तक के अनेक रोग अनायास ही दूर हो जाते हैं।

अमदावाद आश्रम में महामृत्युंजय महायज्ञ सम्पन्न



महाशिवरात्रि के अवसर पर संत श्र आसारामजी आश्रम, अमदावाद में विश्वमंगल उद्देश्य से चतुर्दश ओंकारयुक्त 'महामृत्युंजय म महायज्ञ' वैदिक विधि से सम्पन्न हुआ। आठ घंटे त चले इस महायज्ञ में ५०० से अधिक लोगों ने भा लिया, जिसमें मुख्य रूप से आश्रम के साधक, आश्र परिसर स्थित श्रद्धालु एवं जप-अनुष्ठान हेतु भारत विभिन्न भागों से आये हुए साधक शामिल थे।

उल्लेखनीय है कि समाज में बढ़ रहे वैचारि प्रदूषण को हटाने हेतु पूज्य बापूजी के शिष्यों द्वा महाशिवरात्रि के ही दिन भव्य संकीर्तन यात्रा निका गयी।

इस महायज्ञ में महामृत्युंजय मंत्र का सवा ला जप किया गया तथा मंत्र की सवा लाख आहुतियाँ कु सोलह यज्ञकुंडों में दी गयीं। वैदिक मंत्रों के लयब उच्चारण से सारा वातावरण गूँज उठा। आहुतियाँ दे हेतु गूगल, देसी गाय का घी, तिल, जौ, वानस्पति समिधाएँ, मिश्री, सूखा मेवा आदि का वैदिक मिश्र मंत्रोच्चारपूर्वक बनाया गया था।

रात्रि में भजन, कीर्तन, सत्संग व भगवान शिव बीजमंत्र 'बं' के जप का कार्यक्रम संपन्न हुआ।

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम्।
सर्वस्य प्रभुमीशानं सर्वस्य शरणं बृहत्

'वह परमात्मा समस्त इन्द्रियों से रहित हो पर भी सब इन्द्रियों के विषयों को जाननेवाला है तथ सबका स्वामी, सबका शासक और सबका सब बड़ा आश्रय है।' **(श्वेताश्वतर उपनिषद् : ३.१६**

गुरु की प्रसन्नता के लिए करते रहे तो कर्तापन मिटकर अकर्ताभाव में आ जाते हैं।

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

ब्रह्मनिष्ठ बापूजी के इस माह के ज्ञानयज्ञ का केन्द्रबिंदु रहा - महाराष्ट्र। प्राचीनकाल से भक्ति, ज्ञान की धारा से आप्लावित रही इस भूमि में पूज्य बापूजी ने ज्ञान, भक्ति और योग की त्रिवेणी बहायी।

अध्यात्म के शिखर की, वेदान्त की, अमृतमय तत्त्व की सूक्ष्म बातें... हृदयस्पर्शी भावमय प्रेमाभक्ति की रसधार... शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा के लिए यौगिक प्रयोग... ये पूज्यश्री की अमृतवाणी के केन्द्रबिंदु रहे। महाराष्ट्र में जहाँ-जहाँ लोकलाड़ले बापूजी का पदार्पण हुआ, वहाँ-वहाँ हरेक स्थल पर बापू के दीवानों का हुजूम, श्रद्धा-भक्ति का समन्दर देखते ही बनता था।

२१ से २६ फरवरी तक के ६ दिवस भोलेनाथ की नगरी नासिक (महा.) के नाम रहे। यहाँ महाशिवरात्रि के निमित्त आयोजित 'ध्यान योग शिविर' के प्रथम ३ दिवसीय 'विद्यार्थी उत्थान शिविर' में नासिक के विभिन्न विद्यालयों के अलावा महाराष्ट्र व अनेक प्रांतों के विद्यार्थी भी सम्मिलित हुए। वार्षिक परीक्षाएँ करीब हैं फिर भी बड़ी संख्या में छात्र-छात्राओं ने सोत्साह भाग लिया। २२ फरवरी को श्री काँची कामकोटि पीठ के शंकराचार्य श्री जयेन्द्र सरस्वती भी पधारे। उन्होंने भी विद्यार्थियों को मार्गदर्शन प्रदान किया और ब्रह्मनिष्ठ बापूजी की छत्रछाया में उनके सुखद भविष्य के प्रति आश्वस्त होते हुए शिविरार्थी विद्यार्थियों के सौभाग्य की सराहना की।

योगनिष्ठ बापूजी के खुशनुमा दैवी आभामंडल में सभीने राहत की साँस ली। पूज्यश्री ने उन्हें हँसते-खेलते अपने आनंदमय ईश्वर स्वभाव में जगने की युक्ति बतायी।

बापूजी ने ५० लाख रुपये दिये

महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र के गरीब किसानों की जमीन, जागीर और जीवन बैंकों के ऋण तथा ब्याज के बोझ से डूब रहे हैं। ऋण और ब्याज के बोझ से दबे ५०० से भी ज्यादा किसानों ने आत्महत्या कर अपने जीवन का अंत कर लिया।

उनके परिवारवालों को ढाढ़स बँधाते हुए पूज्य बापूजी ने आवश्यक चीज-वस्तुएँ पहुँचाने की सेवा में ५० लाख रुपये दिये। ''सरकार व बैंकों द्वारा शोषित व्यक्तियों को ज्यादा न सताया जाय। उनसे उदारता व मानवीय संवेदना भरा व्यवहार किया जाय।''- यह स्नेह भरा संदेश बापूजी ने दिया।

पूज्य बापूजी का हृदय द्रवित हुआ। करकसर से जीवनयापन करनेवाले पूज्य बापूजी ने ५० लाख रुपये अर्पण किये। **उन गरीब किसानों के लिए महाराष्ट्र के और लोग, जिनका देश-विदेश में धन भरा पड़ा है, वे इस सेवाकार्य में आगे आयें तो कितना अच्छा!**

सत्संग-ज्ञान वितरण का यह सफर २८ फरवरी से १ मार्च की दोपहर तक ढोराला (महा.) में तो १ मार्च की शाम से ही अहमदनगर (महा.) में प्रारंभ हुआ, जो २ मार्च की दोपहर तक चला। यहाँ भगवान विठ्ठल के भक्तों की भारी संख्या में मौजूदगी को देखते हुए पूज्यश्री ने इस नगर को 'विठ्ठल नगर' कहकर संबोधित किया तो विराट जनमेदनी ने तालियों की गड़गड़ाहट से नगर के इस नये नाम का स्वागत किया। विठ्ठलप्रेमियों के मुख से नगर का नाम अब 'विठ्ठल नगर' ही सुनायी पड़ने लगा है।

विठ्ठल नगर में सत्संग की पूर्णाहुति होते ही पूज्यश्री २ मार्च की शाम परभणी पहुँचे, जहाँ शीत और ग्रीष्म ऋतु की इस संधिवेला में जमकर स्वागत करने को प्रस्तुत थे मेघदेव। इधर मेघ देवता को फिक्र ही नहीं थी कि भक्त भीगकर तर-बतर हो रहे हैं तो उधर भक्तों में भी कोई टस-से-मस नहीं हुआ। पूज्य बापूजी का व्यासपीठ पर आगमन होते ही लोगों की निगाहें व्यासपीठ पर जम गयीं। मेघ देवता तब तक बरसते रहे, जब तक पूज्य बापूजी ने हाथ उठाकर **'वर्षा स्तंभ स्तंभ'** का संकेत नहीं किया। संकेत पाते ही वर्षा थम गयी! इस **'वर्षा स्तंभ'** की लीला के दर्शक रहे पचासों हजार लोग आश्चर्यचकित रह गये कि इस युग में भी ऐसे सामर्थ्यवान महापुरुष हैं जो दैवी शक्तियों को अपने संकेतमात्र से जनता के हित में लगा सकते हैं! लोग देवत्व में जग सकें इसलिए ऐसी लीला उनके द्वारा हो जाती है।

फिर प्रारंभ हुई ब्रह्मनिष्ठ बापूजी की वाणी से आत्मस्पर्शी अमृतवर्षा की रसधार। वर्षा के कारण लोग बाहर से तो तर-बतर थे ही, अब भीतर से भी तर-बतर होने लगे। पहले दिन **'वर्षा स्तंभ स्तंभ'** से वर्षा बँध गयी। दूसरे दिन सत्संग पूरा होते ही पूज्य बापू ने कहा : ''मेघ देवता! तुम्हारी मर्जी पूरन हो। **वर्षा कुरु कुरु।**'' फिर पूज्य बापूजी व्यासपीठ छोड़ें उससे पहले ही वर्षा प्रारंभ हो गयी। 'वर्षा स्तंभ' दृश्य के पचासों हजार लोग साक्षी थे तो इस दृश्य के भी ६०-७० हजार दर्शक साक्षी रहे। लाजवाब हैं प्रकृति और ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों की अठखेलियाँ!

३ मार्च को यहाँ पूर्णाहुति हुई एवं अगले ही दिन ४ से

आप जीवन में सब जगह धोखा खा सकते हैं पर गुरुचरणों में नहीं।

६ मार्च तक नांदेड़ (महा.) में सत्संग प्रारंभ हुआ। सत्संग का शुभारंभ 'विद्यार्थी सत्र' से हुआ। यहाँ के विद्यार्थियों ने तेजस्वी-ओजस्वी जीवन जीने की कुंजियाँ पूज्य बापूजी के श्रीमुख से पायीं, साथ ही सारस्वत्य मंत्र की दीक्षा प्राप्त कर धनभागी भी हुए।

८ व ९ मार्च के दोनों दिन धुलिया (महा.) के नाम रहे। १० व ११ मार्च को प्रकाशा (महा.) में ज्ञानयज्ञ संपन्न हुआ। ११ मार्च को यहाँ के भक्तों को पूज्यश्री के संग पलाश के फूलों से निर्मित प्राकृतिक रंग से होली के रंग में रँगने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। प्रकाशा से सूरत जाते हुए रास्ते में ११ मार्च की एक शाम व्यारा (गुज.) के नाम रही।

इसके अगले ही दिन से हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी १२ से १५ मार्च को होलिकोत्सव व 'ध्यान योग साधना शिविर' सूरत आश्रम (गुज.) में आयोजित हुआ। 'ध्यान योग शिविर' के दौरान कैसे-कैसे दृश्य उपस्थित होते थे और कैसे-कैसे नजारे दृष्टिगोचर होते थे - ये तो जो वहाँ पर थे, वे ही देख पाये, बाकी तो केवल कल्पना ही कर सकते हैं। कभी-कभी पूज्यश्री ध्यान की गहराइयों में डुबो देते थे तो कभी ज्ञान के उत्तम शिखरों पर पहुँचा देते थे; कभी शांत रस में शांत कर देते थे तो कभी हास्य रस में गुदगुदा देते थे; कभी प्रेम रस में सराबोर कर देते थे तो कभी विरह रस के द्वारा दिल की तपन मिटा देते थे। कोई ध्यान में तल्लीन तो कोई प्रेमाभक्ति या विरहभक्ति में अश्रुपात से भीगी पलकें लिये तो कोई शांत रस में तन-मन की सुध-बुध खो बैठे थे, ऐसा माहौल पूरे शिविर में दिखायी दे रहा था। ब्रह्मनिष्ठ बापूजी से दिल को रँगाये बैठे देश-विदेश के लाखों श्रद्धालु बाह्य रंग में भी रँगने हेतु उपस्थित थे। सद्गुरु के पावन सान्निध्य में होली का ऐसा रंगारंग महोत्सव सचमुच समस्त विश्व में अन्यत्र दुर्लभ ही है। एक तरफ रंगों की बौछार तो कुछ ही क्षणों में दूसरी तरफ ज्ञानयुक्त अमृतवाणी की फुहार... बड़ा मनमोहक, विलक्षण दृश्य का सृजन हुआ सूर्यपुत्री तापी नदी के तट पर!

रंग भी कैसा ? हानिकारक रासायनिक रंग नहीं, केसुड़े के फूलों का प्राकृतिक रंग, तीर्थों का जल, गुलाबजल मिश्रित कर बनाया गया आरोग्यदायी रंग! जब लोकलाड़ले हृदयसम्राट बापूजी के पावन करकमलों से इस रंग की बौछार होने लगी तो विराट भक्तसमुदाय अपनी सुध-बुध खो बैठा और मस्त हो गया उस सुहा[वने] रंग में भीगकर। लाखों भक्तों को एक साथ रँगने हेतु मंच, ताकि कोई वंचित न रहे तथा वास्तव में कोई वंचि[त] नहीं रहा। ज्यों भक्तों का सैलाब बढ़ता है, त्यों वैकुण्ठ [...] विशाल और व्यवस्था भी विशाल होती जाती है। एक त[रफ] महिलाएँ... दूसरी तरफ पुरुष... बीच में सुंदर-सुहाव[नी] व्यवस्था ! ४ मंचों पर पूज्य बापूजी का आना-जाना बीच-बीच में सत्संग... अनोखा माहौल था ! चारों मंचों [...] ऊपर-ऊपर से ही जाने की व्यवस्था थी, धरती पर न[हीं] आना पड़ता था।

क्या आप सनातन धर्म के अनुकूल मनाये जानेव[ाले] इस वैदिक होलिकोत्सव में शामिल नहीं हो सके ?

आपको अफसोस है ? कोई बात नहीं, अगले वर्ष [...] इंतजार कीजिये और अभी वी.सी.डी. या एम.पी.[३] (MP3) मँगाकर नयनों से देखने का ही लुत्फ उ[ठा] लीजिये।

नवसारी (गुज.) में १७-१८ मार्च को सत्संग संप[न्न] हुआ। यहाँ बापूजी का पदार्पण १९ वर्ष के बाद हुआ। स[...] नवसारी इन दिनों बापूमय रहा। यहाँ हजारों लोगों [ने] पूज्यश्री के समक्ष व्यसनमुक्त जीवन जीने का संक[ल्प] लिया और गुटखा, पान मसाला आदि जो आगे चल[कर] कैंसर आदि जानलेवा रोगों के कारण होते हैं, उनका त्य[ाग] कर नये जीवन का शुभारंभ किया।

१९ मार्च को राजपीपला (गुज.) में एक दिवसी[य] सत्संग सम्पन्न हुआ। यहाँ भी हजारों लोगों ने व्यसन[...] त्याग का संकल्प लिया और महिलाओं ने प्लास्टिक [...] बिंदी, लाली जैसे अपवित्र सौंदर्य-प्रसाधनों के त्याग[...] वचन दिया। पूज्य बापूजी ने व्यसनमुक्त समाज [...] स्थापना के संकल्प को साकार रूप देते हुए कहा : ''[...] शराब छोड़ने का वचन देते हैं, पान मसाला छोड़ने [...] वचन देते हैं, प्लास्टिक की बिंदी नहीं लगाने का वचन दे[ते] हैं और बाजारू क्रीम नहीं लगाने का वचन देते हैं, वे ह[...] ऊपर करें तो मैं समझूँगा मेरे को दक्षिणा मिल गयी।

ॐ... ॐ... शक्ति... ॐ... भक्ति... ॐ... शराब [...] त्याग... ॐ... पान मसाले का त्याग... ॐ... लाली, क्री[म] का त्याग... प्लास्टिक की बिंदी का त्याग... ॐ... हरि [...] वरण, हरि की भक्ति का स्वीकार हरि के आनंद [...] स्वीकार... ॐ... ॐ... ॐ...''

पूज्य बापूजी के सत्संग-कार्यक्रमों की झाँकियाँ



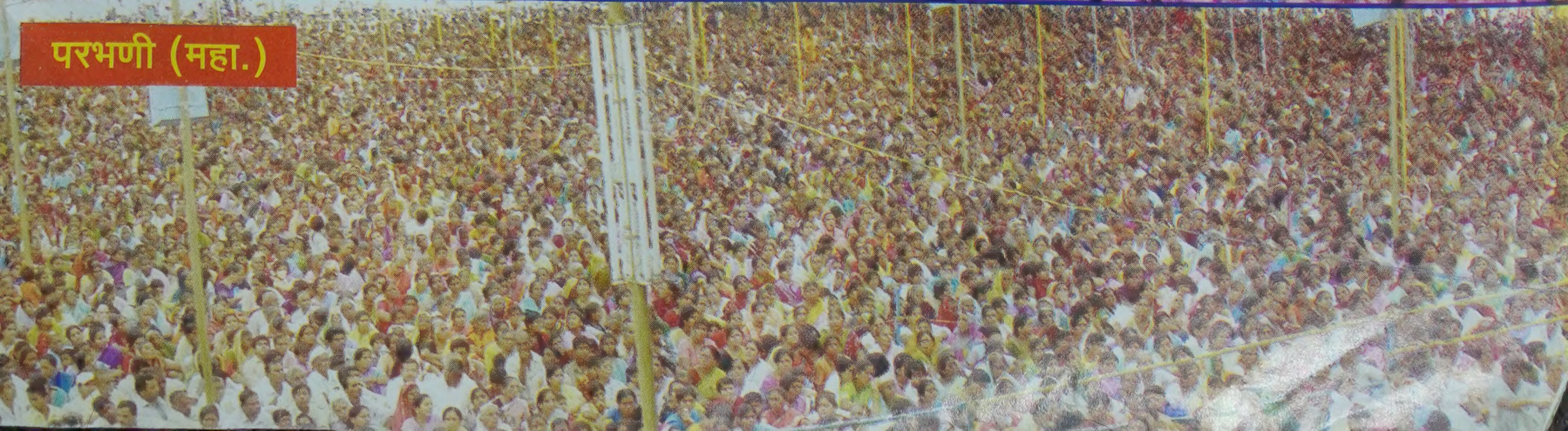
ढोराला, जि. उस्मानाबाद (महा.)



अहमदपुर, जि. लातूर (महा.)



प्रकाशा, जि. नंदूरबार (महा.)



परभणी (महा.)

‘ऋषि प्रसाद’ पत्रिका !
तेरा कैसे करूँ शुक्रिया

‘ऋषि प्रसाद’ पत्रिका !
तेरा कैसे करूँ शुक्रिया ?
तूने मुझे जीना सिखा दिया,
मैं था हैवान तूने इन्सां बना दिया।
करुणा दया प्रेम परोपकार का,
तूने पाठ सिखा दिया।
मूढ़ बने इस दिल में,
प्रभुप्रेम का फूल खिला दिया।
नफरत काम क्रोध लोभ मोह को,
मेरे मन से मिटा दिया।
मुझे अब तुच्छ की चाह नहीं,
तूने भक्ति-सुधारस पिला दिया।
क्यों रखूँ जन्म-मरण का भय,
तूने गीता-अर्थ समझा दिया।
आ जाऊँ प्राणिमात्र के काम,
ऐसा दिल में दीप जगा दिया।
गुरुवाणी के अमृत ने भीतर,
आत्मसुख का दरिया दिखा दिया।
‘ऋषि प्रसाद’ पत्रिका,
तेरा कैसे करूँ शुक्रिया ?
जिस-जिस घर में गयी तू,
उसे हरा-भरा बना दिया।
तूने मुझे जीने का ढंग सिखा दिया,
मैं था हैवान तूने इन्सां बना दिया।

– हरीश बेरी, दिल्ली।

9 April 2006

RNP.NO. GAMC 1132
WPP LIC NO. 207
RNI NO. 48873/91.
Delhi : DL (C) - 01/1130/06-08.
Mumbai : G2/MH/MR-NW-57/2006-08
WPP LIC NO. NW-9